सितंबर 2002

मूल्य : सात रुपये

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

साक्षरता परिदृश्य पर एक नजर

स्वतंत्रता की 55वीं वर्षगांठ पर प्रधानमंत्री का संदेश
कुछ महत्वपूर्ण बातें

स्वतंत्रता की 55वीं वर्षगांठ पर लालकिले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अनेक कार्यक्रमों की घोषणा की। देश में अभूतपूर्व सूखे की स्थिति की ओर संकेत करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि सरकार ने इस स्थिति का मुकाबला करने के लिए सभी संभव कदम उठाए हैं। उन्होंने कहा कि हमारे गोदाम अन्न से भरे हैं और किसी को भी भूख से मरने नहीं दिया जाएगा। उन्होंने कहा कि अंत्योदय योजना का दायरा बढ़ाकर जनता के कमजोर वर्गों को तुरंत राहत पहुंचाई जा रही है। 10,000 करोड़ रुपये की संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के तहत सूखा राहत कार्यक्रमों में तेजी लाई गई है और काम के बदले अनाज योजना के अंतर्गत राज्य सरकारों को 5,000 करोड़ रुपये दिए गए हैं।

प्रधानमंत्री ने घोषणा की कि देश को सूखे और बाढ़ के अभिशाप से बचाने के लिए सरकार एक दीर्घकालीन प्रभावी रणनीति बना रही है। उन्होंने कहा कि जल्दी ही एक नया कार्यक्रम शुरू किया जा रहा है, जिसका नाम होगा प्रधानमंत्री ग्रामीण जल संवर्द्धन योजना। उन्होंने शीघ्र शुरू होने वाले तीन महत्वपूर्ण कार्यक्रमों की भी घोषणा की। इनके अंतर्गत अभावग्रस्त इलाकों में एक लाख हैंडपंप लगाए जाएंगे, एक लाख ग्रामीण प्राइमरी स्कूलों में पेयजल की व्यवस्था की जाएगी और एक लाख पारंपरिक पेयजल स्रोतों का जीर्णोद्धार किया जाएगा।

प्रधानमंत्री ने सभी राजनीतिक दलों से बिजली क्षेत्र के सुधारों के बारे में एक न्यूनतम एजेंडे पर आम राय कायम करने की अपील की। उन्होंने कहा कि बिजली की कमी कई राज्यों में संकट बन चुकी है। श्री वाजपेयी ने कहा कि राष्ट्रीय सुरक्षा के मुद्दों पर सभी राजनीतिक दलों में आमराय है। उन्होंने सवाल किया कि इसी तरह की आमराय सामाजिक और आर्थिक विकास के कुछ जरूरी मुद्दों पर हम क्यों नहीं बना सकते?

आर्थिक मोर्चे पर प्रधानमंत्री ने कहा कि अभाव की अर्थव्यवस्था का स्थान अधिकता की अर्थव्यवस्था ने ले लिया है। आज राशन की दुकानों पर भीड़ नहीं है, गैस और टेलीफोन के कनेक्शनों पर भीड़ नहीं है और मिट्टी के तेल की लंबी कतारें कम हुई हैं। उन्होंने कहा कि पिछले चार सालों में लगभग 60 लाख नए मकान बनाने का प्रबंध किया गया है। इनमें से 35 लाख केवल ग्रामीण इलाकों में और 80 प्रतिशत गरीब परिवारों के लिए हैं। उन्होंने कहा कि 55,000 करोड़ रुपये की लागत से विश्वस्तर के राजमार्गों का एक जाल देशभर में बिछाया जा रहा है। इसी तरह लगभग 60 हजार करोड़ रुपये की प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के तहत पांच सालों में प्रत्येक गांव को बारहमासी सड़कों से जोड़ा जाएगा। प्रधानमंत्री ने कहा कि इन दोनों सड़क योजनाओं से लाखों लोगों को रोजगार मिल रहा है।

स्वतंत्रता दिवस पर अनेक महत्वपूर्ण पहलें

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा राष्ट्र के नाम संबोधन में की गई घोषणाओं के अतिरिक्त स्वतंत्रता दिवस, 2002 के अवसर पर निम्नलिखित महत्वपूर्ण पहलों को भी अनुमोदित किया गया है:

- इस वर्ष भारतीय रेल अपनी 150वीं जयंती मना रही है। इसके प्रति आभार प्रकट करने के लिए सरकार भारतीय रेल के विकास हेतु गैर–बजटीय निवेश के एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार कर रही है। यह कार्यक्रम राष्ट्रीय रेल विकास योजना के नाम से जाना जाएगा। इसके अंतर्गत 15 हजार करोड़ रुपये की लागत से रेलवे नेटवर्क की क्षमता में आई सभी जटिल बाधाओं को अगले 5 वर्षों में दूर कर लिया जाएगा। इन परियोजनाओं में निम्नांकित शामिल होंगे :
- स्वर्ण चतुर्भुज योजना को सुदृढ़ करना ताकि रेलवे 100 किमी प्रति घंटे की उच्च गति वाली अधिक लंबी दूरी की मेल/एक्सप्रेस सवारी गाड़ियां तथा मालगाड़ियां चला सके। इस पर 8,000 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे।
- बंदरगाहों से जुड़े रेलमार्गों को सुदृढ़ करना तथा भीतरी क्षेत्र में मल्टीमोडल कॉरीडोर का विकास करना। इस पर 3,000 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे।
- चार बड़े पुलों का निर्माण – इनमें दो पुल गंगा नदी पर, एक ब्रह्मपुत्र पर तथा एक कोसी नदी पर बनाया जाएगा। इनके निर्माण पर 3,500 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे।
- निर्माण के अंतिम चरण में पहुंचे परियोजना कार्यों के साथ–साथ अन्य महत्वपूर्ण परियोजनाओं को तेजी से पूरा करना। इसके लिए 763 करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे।
- सरकार का जल्दी ही सामाजिक सुरक्षा की एक व्यापक और सहभागी योजना शुरू करने का प्रस्ताव है जिसमें गरीब और मध्यम वर्ग के लोगों के जीवन में आने वाली समस्याओं पर ध्यान दिया जाएगा जैसे – आय बढ़ाने वाली शिक्षा;

(शेष आवरण पृष्ठ 3 पर)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की
प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 47 • अंक : 11

भाद्रपद–आश्विन 1924

सितंबर 2002

कार्यकारी संपादक
राकेश रेणु

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 3015014, फैक्स : 011–3015014
तार : ग्राम विकास

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी

विज्ञापन व्यवस्थापक
पी.सी. आहूजा

आवरण
संतोष वर्मा

फोटो सौजन्य
आईईसी डिवीजन, ग्रामीण विकास मंत्रालय

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

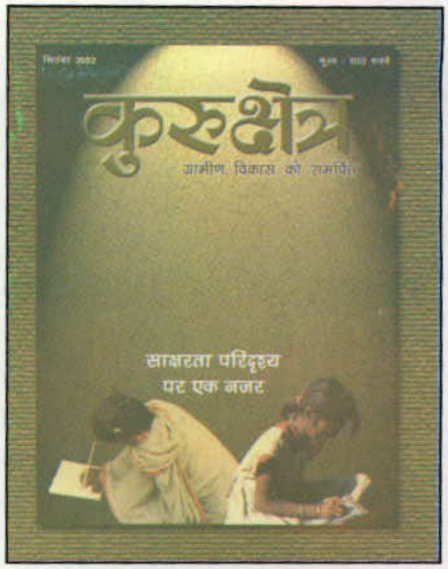

इस अंक में

लेख

• शिक्षा का लोकव्यापीकरण : एक अवलोकन	डा. आशा शर्मा	6
• सभी को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की दिशा में एक महत्वाकांक्षी कदम	डा. उमेश चंद्र अग्रवाल	12
• कितनी व्यावहारिक है शिक्षा नीति में सुधार की जरूरत	डा. आनन्द किशोर	19
• राजस्थान में साक्षरता की स्थिति	प्रकाश नारायण नाटाणी	23
• मध्य प्रदेश में शिक्षा आंदोलन से बढ़ती साक्षरता	डा. बालमुकुंद बघेल	24
• गुजरात में प्राथमिक शिक्षा	देवेन्द्रनाथ के. पटेल	27
• शिक्षा से दूर रोटी, कपड़ा और जीवन का असबाब चुन रहा बचपन	अनिल चमड़िया	29
• वर्तमान भारत में प्रौढ़ शिक्षा	आशारानी व्होरा	32
• संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना	डा. महीपाल	41
• पंचायत मेला – पंचायतीराज सुदृढ़ीकरण की दिशा में एक अभिनव प्रयोग	मोहन शंकर जानी	42
• शाहबाद अंचल में लोक जुंबिश का अभिनव प्रयास	घनश्याम वर्मा	44

साहित्य

• गोस्टा (कहानी)	राजनारायण बोहरे	34
• छह ग़ज़लें	विज्ञान व्रत	39

स्वास्थ्य

• स्वस्थ जीवन का आधार : शाकाहार	जया मण्डावरी	46

पुस्तक चर्चा

• आम आदमी की नजर	रामाज्ञा राय शशिधर	48

कुरुक्षेत्र की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 6105590, फैक्स : 6175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

ग्रामीण लोगों की सहभागिता आवश्यक

इसमें कोई संदेह नहीं है कि ग्रामीण समाज आज इक्कीसवीं सदी में भी किसी भी नई प्रौद्योगिकी को शंका की नजरों से देखता है और पानी से बिजली निकल जाने पर पानी के अनुपयोगी होने जैसी बात सोचता है। यह सोचना लाजिमी भी है क्योंकि गांवों में ही तो अनपढ़ों का मेला लगता है। ऐसे में आवश्यकता इस बात की है कि ऊर्जा बचाओ, पर्यावरण बचाओ जैसे आंदोलन को धरातल पर लाने के लिए लोगों को जागरूक किया जाए। जैसाकि महाराष्ट्र के श्रीगोंदा गांव की एक महिला सीताबाई रामदास मोरे कर रही हैं। निःसंदेह, जुलाई 2002 का अंक काफी रोचक और ज्ञानवर्द्धक है। हालांकि सरकारी और गैरसरकारी योजनाओं द्वारा किए जा रहे प्रयास सराहनीय हैं लेकिन इसमें और अधिक प्रयास करने की जरूरत है। इसके अलावा ग्रामीण लोगों की सहभागिता भी आवश्यक है क्योंकि इसे घर–घर तक पहुंचाना है।

अनिल कुमार
फ्लैट नं. 1209, मुखर्जी नगर
नई दिल्ली

प्रेरणा मिलेगी

कुरुक्षेत्र का 'ग्रामीण विकास के लिए गैरपरंपरागत ऊर्जा' विशेषांक जुलाई 2002 वर्तमान समय के लिए जनोपयोगी और ऊर्जा के लिए मानव के आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा देता है।

सचमुच आज देश ऊर्जा के लिए दूसरे देशों का मोहताज है। यदि देश में गैरपरंपरागत ऊर्जा क्षेत्र को संबल प्रदान किया जाए तो देश को कभी भी ऊर्जा की कमी नहीं होगी। जब देश में ऊर्जा का भरपूर साधन रहेगा तो देश का तेजी से विकास होगा। वासुदेव की कहानी 'बिहान' बेहद पसंद आई।

विनोद आजाद
आदर्श नगर, चौसा
जिला : मधेपुरा (बिहार)

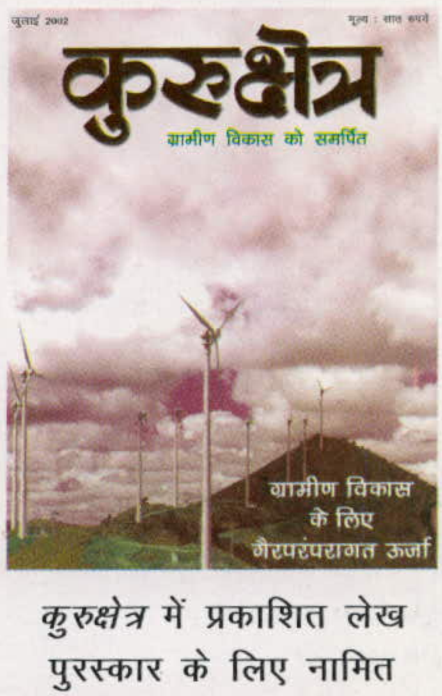

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेख पुरस्कार के लिए नामित

मैं *कुरुक्षेत्र* का नियमित पाठक हूं। पिछले कुछ अंक विशेषांक के रूप में प्रकाशित किए जा रहे हैं। इससे किसी एक विषय पर विभिन्न लेखकों के विचार एक स्थान पर पढ़ने को मिल जाते हैं।

कुरुक्षेत्र अगस्त 2001 अंक में मेरा एक लेख 'पंचायत में महिलाएं : बदलती तस्वीर' को स्थान प्रदान किया गया था। यह लेख *हंगर प्रोजेक्ट* द्वारा 'सरोजनी नायडू पुरस्कार' हेतु नामित किया गया है। इसके लिए मैं *कुरुक्षेत्र* का आभारी हूं।

प्रतापमल देवपुरा
1/सी, शिवाजीनगर
उदियापोल, उदयपुर–313001

ग्रामीण पुस्तकालयों में कुरुक्षेत्र पहुंचे

कुरुक्षेत्र के जुलाई 2002 अंक में 'ग्रामीण विकास के लिए गैरपरंपरागत ऊर्जा' विषय पर सारी सामग्री अच्छी लगी। इससे घरों को रोशन करने से लेकर सिंचाई साधन एवं विभिन्न ग्रामोद्योग का विकास हो सकेगा। क्योंकि आज सारा विकास ऊर्जा पर निर्भर हो गया है। वाकई *कुरुक्षेत्र* ग्रामीणों के लिए वरदान है। क्योंकि इस पत्रिका में ग्रामीणों के बारे में प्रत्येक जानकारी समय–समय पर निकलती रहती है। बड़े–बड़े गांवों में ग्रामीण पुस्तकालय होने चाहिए और *कुरुक्षेत्र* प्रत्येक पुस्तकालय में पहुंचे और गांव वाले पढ़ें तभी हिंदुस्तान के सारे गांव विकसित हो सकेंगे। *कुरुक्षेत्र* में ग्रामीण प्रसंगों तथा ग्रामीण विषय से संबंधित ज्ञानवर्द्धक प्रेरक प्रसंग भी प्रकाशित करें। साथ में गांवों से संबंधित सामान्य ज्ञान का भी परिचय इस पत्रिका के माध्यम से कराया जाए तो उत्तम होगा।

मुकेश मोहन तिवारी
117, बलवंत नगर, गांधी रोड
ग्वालियर–474002 (मप्र)

हर अंक रोचक और ज्ञानवर्धक

कुरुक्षेत्र का जुलाई 2002 का अंक पढ़ा। मैं इसका नियमित पाठक हूं। हर अंक अपने

आप में रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक है। इस अंक में हमने बायोगैस को पढ़ा। बायोगैस सचमुच ही गांवों के विकास में मुख्य भूमिका अदा कर रही है। बायोगैस हमारे गांव में भी 1988 से ही है। सचमुच ही बायोगैस गरीब एवं ग्रामीण जनता का शक्तिशाली साधन है।

इस अंक में सौर एवं पवन ऊर्जा का भी लेख पढ़ा। सचमुच विद्युत ऊर्जा जिस तरह खत्म होती जा रही है, पवन एवं सौर ऊर्जा ही ग्रामीण जनता की धरोहर बनती जा रही है।

इस अंक की कहानी 'बिहान' एक उदाहरण है कि किस तरह लोग शराब एवं स्वार्थी तत्वों के हाथ में फंसकर बर्बाद हो रहे हैं। भारत यायावर की कविता 'आदमी की आवाज' रोचक लगी। नौगढ़ की कहानी में किस तरह औरतें जान जोखिम में डालकर गांवों की तस्वीर बदल रही हैं!

सतीश कुमार सिंह (रिंकु)
ग्रा.–सवैयां, पो.–राजनडीह
जि.–रोहतास (बिहार) 802219

कमजोर आदमी तक पहुंचना ही लक्ष्य

कुरुक्षेत्र का जुलाई अंक मिला, ऊर्जा के संकट की दशा में इस अंक ने जिस नई ऊर्जा को प्रवाहमान किया उसी की आवश्यकता थी। भारत के गांव रूपी *कुरुक्षेत्र* में यह एक 'गीता–उपदेश' का स्थान रखती है – अगर यह कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। क्योंकि इसने 'गैरपरंपरागत ऊर्जा' के लगभग सभी पहलुओं को उजागर किया है। ऊर्जा के स्रोत, वर्तमान दशा एवं संभावनाएं, लाभ–हानि इन सभी पहलुओं पर इतना समग्र अध्ययन इतने थोड़े पन्नों में अन्यत्र कठिन था।

मनुष्य के जीवन में ऊर्जा की आवश्यकता और अनिवार्यता की अनदेखी, 'ताप–विहीन' सूर्य की कल्पना के समान है और आज मनुष्य के सामने तेजस्विता–रक्षण का 'गैर–परंपरागत' ऊर्जा ही विकल्प है। ऐसी दशा में यह अंक वरदान सिद्ध होगा, साथ ही साथ यह केवल भारतीय ग्रामीणों के लिए ही नहीं बल्कि विश्व के लिए उपयोगी होगा। अंत में आशा है कि हम हर अंक में उसके व्यावहारिक पहलुओं को नहीं भूलेंगे, क्योंकि इसकी उपयोगिता पाठक के मस्तिष्क में नहीं दूर–सुदूर गांवों को रोशन करने में है। सबसे कमजोर आदमी तक पहुंचना ही इसका लक्ष्य है।

श्यामजी श्रीवास्तव
ग्रा.–मिउरा, पो.–सैदाबाद
जि.–इलाहाबाद–221508 (उप्र)

संग्रहणीय अंक

कुरुक्षेत्र का जून 2002 अंक पढ़ा। अपने आकर्षक कलेवर में ज्वलंत मुद्दों पर केंद्रित

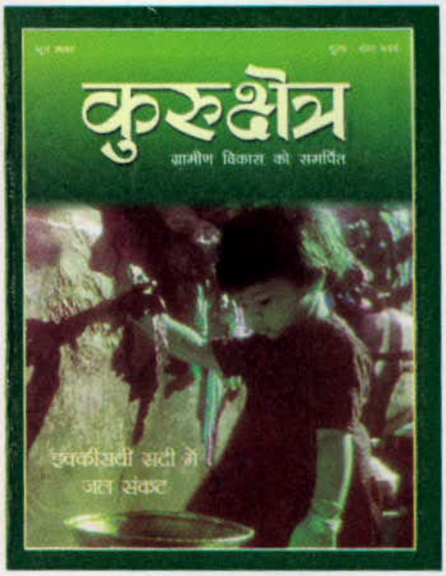

आलेखों के साथ हर बार की तरह यह अंक भी संग्रहणीय बन पड़ा है। 21वीं सदी में जल संकट तथा पर्यावरण संरक्षण पर केंद्रित संपादकीय टिप्पणी पत्रिका को सम–सामयिकता से जोड़ती है और ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका की वैचारिक दृष्टि को मजबूत संबल प्रदान करती है। ऐसे कुशल संपादन हेतु निश्चय ही आप साधुवाद के पात्र हैं। 'जल संकट' पर नमिता सक्सेना का आलेख महत्वपूर्ण लगा तथा 'राष्ट्रीय जलनीति' पर अनंत मित्तल का लेख पानी के स्रोतों, उसकी उपलब्धता तथा प्रबंधन के समक्ष समय की चुनौतियों से आगाह कराता है। साथ ही, 'ग्रामीण पेयजल आपूर्ति कार्यक्रम' पर दी गई विस्तृत रिपोर्ट अत्यंत उपयोगी और ज्ञानवर्द्धक लगी। सामुदायिक विकास हेतु चल रहे जन आंदोलनों में महिलाओं की भूमिका को रेखांकित करता भारत डोगरा का लेख अत्यंत संवेदनात्मक और उपयोगी है। 'पर्यटन उद्योग' के विकास हेतु डा. नरेंद्र पाल सिंह ने जो उपाय सुझाए हैं, वे वस्तुतः आज की परिस्थितियों में आवश्यक लगते हैं। छत्तीसगढ़ के आदिवासियों को मुख्यधारा में लाने का प्रयास इरा झा ने अपने आलेख के माध्यम से किया है, पसंद आया। विकास हेतु आवश्यकता इसी बात की है कि समाज के पिछड़े वर्गों को विकास की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा दी जाए। पुस्तक चर्चा स्तंभ में साहित्यिक विषयों पर लिखी जा रही, समन्वित विकास से संबद्ध पुस्तकों की समीक्षा प्रकाशित करें। उम्मीद है कि आगे भी ग्रामीण विकास को गति देने में *कुरुक्षेत्र* की भूमिका सराहनीय होगी।

अनुपम निशांत
एफ 37/23 चुनार सीमेंट फैक्टरी,
मिर्जापुर, (उप्र)

स्तरीय रचनाओं से सजी–संवरी पत्रिका

विगत कई वर्षों से *कुरुक्षेत्र* का पाठक हूं। इधर पत्रिका के स्तर में हर दृष्टि से उल्लेखनीय सुधार एवं नवीनता का संचार देखकर अतीव प्रसन्नता हो रही है। प्रथम आवरण पृष्ठ से अंतिम आवरण पृष्ठ तक अपने नयनाभिराम कलेवर में सुसज्जित पत्रिका का हर पृष्ठ पठनीय एवं अवलोकनीय कह सकता हूं, अद्यतन अंक जून 2002 के हवाले से।

मूलतः ग्रामीण विकास एवं ग्राम्यबोध को समर्पित यह पत्रिका अनेकवर्णी रचनावैविध्य से सजी–संवरी है, जो यकीनन आपकी कुशल संपादकीय दृष्टि का नतीजा है। सभी लेखों के साथ साहित्य भाग स्तरीय है। पुस्तक समीक्षा देकर आपने पत्रिका को और भी स्तरीय बना दिया है। इस उत्कृष्ट संपादन के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं स्वीकार करें।

शंभुनाथ तिवारी
सी–125, काशीपुरी, (मंदिर मार्ग)
भीलवाड़ा–311001 (राजस्थान)

प्रेरणास्पद हैं नारियों के संघर्ष

ग्रामीण विकास को समर्पित पत्रिका *कुरुक्षेत्र* ने जिस तरीके से अपने लक्ष्य को पाने के कर्तव्य का निर्वहन किया है, वह बेमिसाल है। 'दूसरों का दर्द बांट रही महिलाएं' प्रस्तुत अंक में सर्वाधिक प्रेरणास्पद और ओजपूर्ण लेख है। समाज में अपनी पहचान बनाकर, संघर्ष करके और आगे बढ़ते हुए तमाम नारियों ने दूसरों के जख्म पर मलहम लगाकर वास्तव में एक अनुकरणीय कार्य किया है, जिसे शब्दों में व्यक्त कर पाना मुश्किल है।

साहित्य के अंतर्गत 'तमाचा' शीर्षक कहानी निम्न मध्यम वर्ग की परेशानियों तथा उनसे जूझते हुए जीवनयापन करने की जिजीविषा का बखूबी चित्रण करती है।

कजरी मानसी ऐश्वर्यम् व
कस्तूरी शिवम् सौन्दर्यम
बिहार

जल संकट चिंतनीय

कुरुक्षेत्र का जून का जल विशेषांक अत्यंत ही रोचक लगा।

जिस प्रकार भारत में उत्तरोत्तर जल संकट गहराता जा रहा है, वह अत्यंत ही चिंतनीय विषय है, विडंबना देखिए अपने भारत की जहां एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों में बारह रुपये प्रति लीटर दूध मिलता है वहीं हमारे आधुनिक भारत की शान कहिए या विवशता कि बारह रुपये प्रति लीटर पानी पीने के लिए हम विवश हैं। सरकारी प्रबंधन भी ग्रामीण क्षेत्रों से परे नजर आता है। कितने दुर्भाग्य की बात है कि विश्व की लगभग सभी देशों की सरकारें राजनैतिक कारणों से इस मुद्दे पर विचार करने से कतराती नजर आती हैं। भारतीय किसान भी किसी भी अन्य देश के मुकाबले सर्वाधिक पानी की मात्रा रहने के बाद भी कभी बाढ़ तो कभी अकाल का सामना करते हैं।

सहारनपुर जिले की रोशन और रेहाना सरीखी महिलाएं देश में साहस का परिचय देती रहें तो देश की महिलाओं की स्थिति में निश्चित ही आमूल-चूल परिवर्तन होगा। कहानी 'तमाचा' वास्तविक जीवन की असहनीय पीड़ा कह जाती है। एक ऐसी सच्चाई के रूप में जिससे इंकार नहीं किया जा सकता। 'गर्मी का राजा पुदीना' लेख अत्यंत ही ज्ञानवर्द्धक लगा।

मिथिलेश कुमार पोद्दार
ग्राम-पो.-बलुआचक
जिला-भागलपुर (बिहार)

निचोड़ है संपादकीय

कुरुक्षेत्र ने उपाय सुझाकर
पहल की है अनमोल बड़ी।
जलसंकट का समाधान तथा
करें कैसे जल का बेहतर प्रबंधन
जून 2002 अंक का है मुख्य आकर्षण।
सरकार की जलनीति का भी
दिया है आपने सराहनीय विवरण।
आ गई है फिर बरसात
बाढ़ भी अब आएगी ही
अनुकूल समय पर *कुरुक्षेत्र* आया
जल की करनी होगी परवाह
लोगों को है सिखलाया।
मध्यम वर्ग की मानसिक पीड़ा को
'तमाचा' ने है दिखलाया।
स्वास्थ्य का ध्यान कराकर
पुदीना का आपने स्वाद चखाया
पर्यटन स्थलों और पर्यटन उद्योग
का महत्व बताकर
छुट्टियों में घूमने को बाध्य किया।
एक लेख में ऐसा पाया, जिसमें
स्वयं दर्द में रहकर भी महिलाएं
दूसरों का दर्द हैं बांट रही।
गांवों के लिए समर्पित पत्रिका ने
ग्रामीणों को जागरूक बनाया
ग्रामीण पेयजल आपूर्ति कार्यक्रम बनाकर
कुरुक्षेत्र के इस अंक का निचोड़ संजोया
बेहतर संपादकीय प्रस्तुत कर।

रजनीश कांत
मु.-जनकपुर, पो.-बुनियादगंज
जिला-गया, बिहार-823003

जनसामान्य की आकांक्षाओं पर खरी उतरती है पत्रिका

कुरुक्षेत्र जून 2002 के अंक का आद्योपांत अध्ययन करके काफी संतुष्टि महसूस हुई। पत्रिका साफ-सुथरे, आकर्षक कलेवर में सहज ही ध्यान खींचती है। 'इक्कीसवीं सदी में जल संकट' जैसे सामयिक विषय पर एक ही जगह प्रभूत सामग्री उपलब्ध करवाकर *कुरुक्षेत्र* ने एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। बढ़ती आबादी, घटता जल समकालीन युग का यथार्थ बन चुका है। हम कथित 'प्रगतिशील' मानवों को इस संकट से उबरने के लिए वास्तविक रूप में विवेक का परिचय देना होगा। बढ़ती आबादी पर रोक लगाने के साथ-साथ जल की एक-एक बूंद को अमृत-तुल्य मानकर उसका सदुपयोग करना ही समय की मांग है। आज हमारी सदानीरा नदियां – सिंधु, सतलज, झेलम, रावी, व्यास, चेनाब, गंगा, यमुना, सरयू, गंडक आदि भी हमारी आवश्यकताओं पर खरी नहीं उतर पा रही हैं, तो इसके जिम्मेदार भी हम हैं। नदियों के किनारे बड़े-बड़े उद्योग लगाकर उन्हें नर्क-तुल्य गंदगी से सराबोर कर दिया है हमने। उम्मीद है कि *कुरुक्षेत्र* इसी प्रकार के शोधपूर्ण विषयों को प्रकाशित कर जनसामान्य की आकांक्षाओं पर खरी उतरती रहेगी।

मुन्नूलाल यादव
ग्राम – पुरुषोत्तमपुर
पो.-सोनपुर वाया गेसड़ी
जिला- बलरामपुर (उप्र)

कुरुक्षेत्र का वार्षिकांक
बुनियादी सेवाओं की मौजूदा स्थिति पर
(अक्तूबर 2002 अंक)

- लगभग 72 पृष्ठ
- मूल्य 15 रुपये
- अपनी प्रति सुरक्षित कराएं
- स्थानीय विक्रेता को संपर्क करें
  अथवा इस पते पर लिखें :

विज्ञापन और प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, लेवल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

संपादकीय

शिक्षा विकसित समाज का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है। विश्व के लगभग सभी समाजों और सभी कालों में शिक्षा का महत्व एक समान बना रहा है। वस्तुतः उन्हीं समाजों ने उल्लेखनीय प्रगति की है जहां शिक्षा का महत्व स्वीकार किया गया, न केवल स्वीकार ही किया गया बल्कि उसके प्रसार के लिए समुचित और वास्तविक व्यवस्था भी की गई। जिन समाजों में शिक्षा का आलोक नहीं फैला वे कूप–मंडूक और अतीतजीवी बने रहे, इसके अनेक उदाहरणों से हम वाकिफ हैं।

वस्तुतः शिक्षा और साक्षरता हमें आधुनिक सभ्यता की उपलब्धियों को जानने–समझने और उन्हें आत्मसात करने के योग्य बनाती है, अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के साथ–साथ आधुनिक वैज्ञानिक उपलब्धियों से जोड़ती है और चाहे हम किसी भी कार्यव्यापार से संबद्ध क्यों न हों – उनसे जुड़ी उपयोगी तकनीक के दैनिक जीवन में प्रयोग को प्रोत्साहित करती है। यह हमारी विश्लेषण क्षमता और तर्कबुद्धि का विकास करती है और सही–गलत का निर्णय कर पाने का विवेक पैदा करती है।

55 वर्ष पूर्व स्वतंत्रता प्राप्ति के समय अन्य क्षेत्रों की तरह शिक्षा के मामले में भी हमारी स्थिति अत्यंत दयनीय थी। 1951 में देश की मात्र 18.33 प्रतिशत आबादी साक्षर थी, लेकिन विगत आधी शताब्दी के सुनियोजित प्रयास से इस स्थिति में काफी फर्क आया है। संविधान के नीति–निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 45 से अर्जित शक्ति और प्रेरणा से अनुप्राणित सर्वशिक्षा की 93वें संविधान संशोधन तक की इस यात्रा में अनेक महत्वपूर्ण पड़ाव आए हैं जहां ठहर कर हमारे नीति–निर्माताओं ने हासिल उपलब्धियों और शेष लक्ष्य का मुआयना किया, अनुभवजनित संशोधन किए और पुनः लक्ष्योन्मुख हुए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1968, 1976 का संविधान संशोधन जिसके द्वारा शिक्षा को राज्य सूची से निकाल कर समवर्ती सूची में लाया गया, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और 93वां संविधान संशोधन 2001, जिसके द्वारा 6 से 14 वर्ष के बच्चों को अनिवार्य रूप से स्कूल भेजना माता–पिता और अभिभावकों का उत्तरदायित्व बना दिया गया है – ये इस यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव हैं। अब शिक्षा प्राप्त करना बच्चों का मौलिक अधिकार है और उन्हें प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना न केवल सरकार की, वरन माता–पिता और सरकार दोनों की सम्मिलित जिम्मेदारी है।

इन प्रयासों का ही परिणाम है कि 1991 से 2001 के दशक में साक्षर नागरिकों की संख्या में आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई है और 1991 के 52.21 प्रतिशत से बढ़कर 2001 में साक्षरों की कुल आबादी 65.38 प्रतिशत हो गई है। मात्र एक दशक में 12.46 प्रतिशत की वृद्धि बीती सदी के अन्य किसी भी दशक की तुलना में सर्वाधिक है। उल्लेखनीय है कि पहली बार देश के कुल निरक्षर लोगों की संख्या में भी कमी आई है, अन्यथा अबतक निरक्षर लोगों के प्रतिशत में तो कमी आती थी लेकिन आबादी बढ़ने के साथ–साथ हर दशक में निरक्षरों की कुल संख्या बढ़ती ही जाती थी। यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है।

लेकिन तसवीर का दूसरा पहलू भी है। शिक्षा और साक्षरता के प्रसार की यह गति पूरे देश में एक जैसी अग्रगामी नहीं है। 1991–2001 के दौरान जहां राजस्थान तथा दादरा और नागर हवेली में साक्षरों की संख्या दोगुनी से भी अधिक हो गई है, नगालैंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा दमन और दीव में 80 प्रतिशत से अधिक की बढ़ोतरी दर्ज की गई है, वहीं अनेक राज्यों की प्रगति अधोगामी रही है। इनमें सर्वाधिक दयनीय स्थिति बिहार की है। 1991–2001 के दशक में यहां निरक्षरों की संख्या में 9.33 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसके अलावा नगालैंड, दिल्ली, मणिपुर और चंडीगढ़ में भी निरक्षरों की संख्या में कतिपय वृद्धि हुई है लेकिन यह वृद्धि काफी मामूली – आधे प्रतिशत से भी कम है। विकास की इस अधोगामी गति के कारण क्या हैं – यह सवाल हमारे नीति–निर्धारकों की चिंता का कारण बना हुआ है। जिन राज्यों में राज्य सरकारें जिम्मेदारीपूर्वक अपने दायित्वों का निर्वहन कर रही हैं वहां स्थिति में उल्लेखनीय और प्रशंसनीय परिवर्तन आया है। केंद्र सरकार अपने प्रयासों में निरंतर गंभीर है – 93वां संविधान संशोधन इसका ताज़ा उदाहरण है।

कहना न होगा कि साक्षरता और शिक्षा परिदृश्य को इस बार हमने अपना विषय बनाया है। अंक में शामिल विद्वान लेखकों के कई लेख इस मुद्दे की न केवल विस्तृत जानकारी आपको देंगे बल्कि पूरे परिदृश्य को अलग–अलग कोणों से देखने–परखने का अवसर भी प्रदान करेंगे। उम्मीद है अंक आपको पसंद आएगा। आपके पत्रों की प्रतीक्षा रहेगी। अपनी प्रतिक्रिया से जरूर अवगत कराएं। ❑

शिक्षा का लोकव्यापीकरण
एक अवलोकन

डा. आशा शर्मा

भारतीय संविधान की धारा 45 में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को राज्य का एक नीति–निर्देशक सिद्धांत घोषित किया गया था – "राज्य इस संविधान के कार्यान्वित किए जाने के समय से 10 वर्ष के अंदर सभी बच्चों के लिए, जब तक वे चौदह वर्ष की आयु पूर्ण नहीं कर लेंगे, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा।"

मानवाधिकार घोषणा के लेख–26 के अनुसार शिक्षा सबका अधिकार है। प्रारंभिक शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य होगी। प्रौद्योगिकी एवं व्यवसाय संबंधी शिक्षा सामान्यतः सबको उपलब्ध होगी और योग्यतानुसार उच्च शिक्षा भी उपलब्ध होगी।

शिक्षा व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की ओर उन्मुख होगी और व्यक्ति को मानवाधिकारों एवं मूलभूत स्वतंत्रता के प्रति जागरूक करेगी। शिक्षा सब राष्ट्रों, जातियों एवं धर्मों में आपसी समझ, सहिष्णुता और सौहार्द्र की भावना का वातावरण बनाएगी जिससे संयुक्त राष्ट्र विश्व शांति को सुरक्षित रख सके।

बच्चों को मिलने वाली शिक्षा का चयनाधिकार अभिभावकों के पास सुरक्षित रहेगा।

त्रों के नामांकन में काफी वृद्धि हुई है। 1950–51 में देश के प्राथमिक व उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 2.23 लाख थी जिनमें बच्चों का नामांकन 222.73 लाख था और अध्यापकों की संख्या 6.24 लाख थी। आज विद्यालयों की संख्या बढ़कर 7.75 लाख से अधिक हो गई है जिनमें बच्चों का नामांकन 1514.50 लाख से अधिक है और अध्यापकों की संख्या लगभग 29.86 लाख है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार देश की 94 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या के लिए तीन किमी से कम दूरी पर अब एक उच्च प्राथमिक विद्यालय की सुविधा उपलब्ध है। जिन क्षेत्रों में बच्चे विद्यालय जाने में असमर्थ हैं, वहां औपचारिक शिक्षा केंद्र के रूप में विद्यालय स्वयं बच्चों के पास पहुंच रहे हैं। इस उद्देश्य के लिए देश में लगभग 8.84 लाख केंद्र कार्य कर रहे हैं। भारत में प्रारंभिक शिक्षा की प्रगति या विकास सारणी 1 एवं 2 में द्रष्टव्य है :

विभिन्न नीतियां एवं उनका क्रियान्वयन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 तथा संशोधित शिक्षा नीति, 1992 के अनुसार निरक्षरता दूर करने तथा शिक्षा अधूरी छोड़ने वालों की संख्या में कमी लाने के लिए प्राथमिकता दी जा रही है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दृष्टि से दो बड़ी योजनाएं अनौपचारिक शिक्षा योजना तथा राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्रारंभ की गई थीं। अनौपचारिक शिक्षा योजना को शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े दस राज्यों में केंद्र की प्रायोजित योजना के रूप में चलाया जा रहा है। इस योजना का विस्तार शहरी गंदी बस्तियों, जनजातीय क्षेत्रों, पर्वतीय तथा रेगिस्तानी इलाकों में भी किया गया है। साथ ही बाल श्रमिकों के लिए भी विशेष परियोजना प्रारंभ की गई है। केवल लड़कियों के लिए ही इस योजना के अंतर्गत 78,000 केंद्र कार्य कर रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुपालन में सन् 1987 से आपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना प्रारंभ की गई। यह योजना मूल रूप से विद्यालयों की व्यवस्था को सुधारने से संबंधित है। इस

सारणी 1

प्रारंभिक शिक्षा की प्रगति : नामांकन संख्या (दस लाख में)

वर्ष	प्राथमिक (कक्षा 01 से 05 तक) (आयु 06 से 11 वर्ष)			उच्च प्राथमिक (कक्षा 06 से 08 तक) (आयु 11 से 14 वर्ष तक)		
	छात्र	छात्रा	कुल संख्या	छात्र	छात्रा	कुल संख्या
1950–51	13.8	5.4	19.2	2.6	0.5	3.1
1960–61	23.6	11.4	35.0	5.1	1.6	6.7
1970–71	35.7	21.3	57.0	9.4	3.9	13.3
1980–81	45.3	28.5	73.8	13.9	6.8	20.7
1990–91	57.0	40.4	97.4	51.5	15.5	34.0
1991–92	58.6	42.4	100.9	22.2	13.6	35.6
1992–93*(प्रा.)	60.5	44.9	105.4	23.7	15.0	38.7
1993–94 (प्रा.)	61.8	46.4	108.2	24.2	15.7	39.9
1994–95 (प्रा.)	62.3	46.8	109.1	24.5	15.8	40.3

** प्रा. – प्रावधिक*

इस कठोर एवं दृढ़संकल्प की घोषणा के पांच दशक के पश्चात आज प्राथमिक शिक्षा तो निःशुल्क हो गई परंतु सबके लिए शिक्षा आज भी सुनिश्चित नहीं की जा सकी है। छः से चौदह वर्ष की आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की दिशा में सघन प्रयास किए गए। फलस्वरूप विगत समय में विद्यालयों की संख्या और

सारणी 2

भारत में शिक्षण संस्थाएं एवं शिक्षकों की संख्या

वर्ष	शिक्षण संस्थाएं		शिक्षक (संख्या हजार में) प्राथमिक (कक्षा 1 से 5)			शिक्षक (संख्या हजार में) उच्च प्राथमिक (कक्षा 6 से 8 तक)		
	प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला	कुल
1950–51	209671	13596	456	82	538	73	13	86
1960–61	330399	49663	615	127	742	262	83	345
1970–71	408378	90621	835	225	1060	463	175	638
1980–81	494503	118555	1021	342	1363	598	253	851
1990–91	560935	151456	1143	473	1616	717	356	1073
1991–92	566744	155926	1152	492	1644	714	365	1079
1992–93*(प्रा.)	572541	153921	189	493	1682	736	346	1082
1993–94 (प्रा.)	572923	155707	1196	507	1703	710	370	1080
1994–95 (प्रा.)	581305	163605	1181	533	1714	732	390	1122

** प्रा. : प्रावधिक*

स्रोत : सेलेक्टेड एजुकेशनल स्टेटिस्टिक्स, 1994–95, मानव संसाधन विकास मंत्रालय,

योजना के अंतर्गत प्राथमिक विद्यालय के लिए दो कमरों का भवन (जिसमें लड़के–लड़कियों के लिए पृथक शौचालय की व्यवस्था हो), बड़ा–सा बरामदा, समूचा भवन (सभी मौसम में प्रयोग के योग्य), शिक्षण–सामग्री, आवश्यक खिलौने, खेल का सामान, ब्लैक बोर्ड, चार्ट, एक शिक्षक वाले सभी विद्यालयों में 'दूसरा अध्यापक' महिला शिक्षिका को रखने की प्राथमिकता तथा कुल मिलाकर न्यूनतम 22 वस्तुएं शिक्षण संस्थान चलाने के लिए अवश्य उपलब्ध कराए जाने की अनिवार्यता की गई है। यह योजना 1987–88 से प्रारंभ कर 1994–95 तक देश के सभी विकास खंडों में लागू कर दी गई थी तथा इसके लिए भारत सरकार ने 1,103.31 करोड़ रुपये की सहायता भी जारी की है।

प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के बावजूद अभी भी बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले बच्चों की संख्या की समस्या गंभीर बनी हुई है। वर्ष 1996 की यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार, सिर्फ भारत में विद्यालय से बाहर लड़कियों का प्रतिशत 39 है जो विगत वर्षों में घटने की बजाय बढ़ा ही है। "अभी भी भारत में 70 प्रतिशत संख्या ऐसे बच्चों की है जो विद्यालय से बाहर हैं और चिंता की बात यह है कि इनमें अधिकांश संख्या लड़कियों की है।

1995 में ही 37.69 लाख लड़कियों ने प्राथमिक स्तर पर ही विद्यालय छोड़ दिया। माध्यमिक स्तर पर 56.53 प्रतिशत लड़कियां विद्यालय छोड़कर चली गईं। बचपन में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले बच्चों के कारण देश को प्राथमिक शिक्षा का जो लाभ मिलना चाहिए वह नहीं मिल पा रहा। ऐसे बच्चों के लिए अनौपचारिक शिक्षा का कार्यक्रम चलाया जा रहा है। आज करीब तीन लाख अनौपचारिक शिक्षा केंद्रों में लगभग 70 लाख बच्चे अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

राजस्थान सरकार ने बालिका शिक्षा में विस्तार करने के उद्देश्य से 1994–95 में ग्रामीण क्षेत्रों के आठ जिलों में सरस्वती योजना प्रारंभ की, जिसके अंतर्गत 100 प्राथमिक पाठशालाएं खोली गईं। इस योजना का विस्तार हुआ। अन्य जिलों में 1996–97 तक इन पाठशालाओं की संख्या लगभग 1,000 हो गई थी। बालिका शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए कक्षा 1 से 8 तक की बालिकाओं के लिए "निःशुल्क पाठ्यपुस्तक वितरण योजना" 1994–95 से निरंतर जारी है। इसके अतिरिक्त जो बालिकाएं किसी कारण से औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ हैं, उनके लिए 1994–95 में 3,200 और 1995–96 में चार हजार अनौपचारिक शिक्षा केंद्र खोले गए हैं ताकि वे भी शिक्षा प्राप्त कर सकें।

ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं को माध्यमिक एवं उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए शिक्षा विभाग के सभी मंडल मुख्यालयों पर 50–50 की क्षमता वाले बालिका छात्रावासों का निर्माण किया गया है। राज्य सरकार द्वारा मान्यता एवं अनुदान प्राप्त गैरसरकारी बालिका शालाओं के अनुदान में वृद्धि की गई है।

पंचवर्षीय योजनाओं में अपनाई जाने वाली रणनीति में भी शिक्षा का यही लक्ष्य है कि सभी को शिक्षा अनिवार्य घोषित कर दी जाए और इस योजना को क्रियान्वित करने के लिए विभिन्न सरकारी एवं गैरसरकारी कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। राजस्थान में लगभग 17,600 अनौपचारिक शिक्षा केंद्र प्रौढ़ शिक्षा निदेशालय द्वारा, 1,330 अनौपचारिक शिक्षा केंद्र 19 स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा तथा लगभग 2,900 केंद्र प्रहर शिक्षा कार्यक्रम के तहत चलाए जा रहे हैं। साथ ही प्रतिदिन नई सोच एवं चिंतन के साथ ही सीडा के आर्थिक सहयोग से 'लोकजुंबिश कार्यक्रम' के तहत भी दूरदराज के गांवों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए प्रयास किए गए हैं परंतु अभी तक यह योजना भी अपने उद्देश्य में पूर्णरूपेण सफल नहीं हो पाई है।

शिक्षा के लोकव्यापीकरण की संकल्पना को साकार करने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश में शिक्षा गारंटी योजना के नाम से एक नया अभिनव प्रयोग सन् 1997 में प्रारंभ हुआ, जिसमें राज्य सरकार ने शिक्षा को विकेंद्रित करने की नीति का अनुपालन किया। इस योजना का उद्देश्य ऐसे सुदूर ग्रामीण अंचलों में शिक्षा का लाभ पहुंचाना है जहां पर एक किलोमीटर की परिधि में कोई शिक्षा सुविधा उपलब्ध नहीं है। छह से चौदह वर्ष के कम से कम 40 बच्चों वाले ऐसे ग्रामीण क्षेत्रों से ग्रामीण समुदाय की मांग पर शिक्षा गारंटी शाला खोलने का प्रावधान रखा गया है। आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों की संख्या यदि न्यूनतम 25 है तो समुदाय की मांग पर वहां पर भी 90 दिन के अंदर शाला खोली जा सकती है, जिसमें शिक्षक के नाम पर एक 'गुरूजी' की नियुक्ति की जाएगी। यह शिक्षा गारंटी शाला विकेंद्रित तरीके से पंचायत के अंतर्गत होगी। इस प्रकार एक निश्चित अवधि में शालाओं की स्थापना कर, वहां पर 70 हजार गुरूजी की नियुक्तियां हो गईं। भारत सरकार ने इसको श्रेष्ठ योजना माना भी, इसको "कॉमन वेल्थ अवार्ड" भी प्राप्त हुआ है। महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश में इसी तरह के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

वर्तमान परिदृश्य

आजादी प्राप्त करने के पश्चात् हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा का जैसा विस्तार हुआ, वैसा किसी अन्य देश में नहीं हुआ। अब तक शिक्षा के विकास के लिए अथक प्रयास तथा अनेक संसाधन जुटाए गए हैं। विभिन्न सरकारी एवं गैरसरकारी प्रयासों द्वारा शिक्षा के विस्तार में कई गुना वृद्धि भी हुई, किंतु शिक्षा में अपेक्षित स्तर पर गुणवत्ता संवर्धन नहीं हो सका। भारत में शिक्षा का स्तर शनैःशनैः गिरता चला गया। इस तथ्य को स्पष्ट करती है यूनिसेफ की वह फैक्टशीट जो पिछले दिनों "विश्व के बच्चों की स्थिति, 1999" नामक रिपोर्ट में प्रकाशित हुई है। इसमें निम्नलिखित तथ्य सामने आते हैं :

- विद्यालय में पढ़ने वाले बच्चों में से करीब पचास प्रतिशत कक्षा पांच में पहुंचने से पहले ही पढ़ाई छोड़ देते हैं।
- पांचवीं कक्षा की प्राथमिक शिक्षा पूर्ण करने वाले बच्चों में से करीब आधे ज्ञान के न्यूनतम स्तर को भी प्राप्त नहीं कर पाते।
- पांचवीं योजना अवधि से प्राथमिक स्तर पर मात्र व्यय शिक्षा पर कुल व्यय के 59 प्रतिशत से घटकर 48 प्रतिशत रह गया है।
- विद्यालय से बाहर छूट गए निरक्षर बच्चों की सर्वाधिक संख्या भारत में है।

- भारत में कुल अशिक्षितों में दो–तिहाई महिलाएं हैं।
- विश्व का हर तीसरा निरक्षर व्यक्ति भारतीय है।

शिक्षा के क्षेत्र में यह स्थिति अत्यंत चिंतनीय है। देश में शिक्षा की वर्तमान विषय–स्थिति और उसके नकारात्मक परिणाम की अभी भी अनदेखी की जा रही है।

आर्थिक मानचित्र के शिखर पर बैठे देश जापान और कोरिया प्राथमिक शिक्षा में अधिकतम निवेश करके विकास के वर्तमान स्तर तक पहुंचे, किंतु हमारे देश में उच्च शिक्षा पर ही विशेष ध्यान दिया जाता रहा।"

भारत में शिक्षा के निम्न औसत के अलावा यहां शैक्षिक संप्राप्ति स्तर में भी भारी असमानताएं हैं। उदाहरण के लिए एक ओर केरल का नगरीय क्षेत्र पूर्णतः साक्षर है तो दूसरी ओर यहां अनुसूचित जाति की महिलाओं में साक्षरता स्तर लगभग शून्य है। सामान्यतः क्षेत्र, वर्ग, जाति और लिंग के अनुसार साक्षरता दर में व्यापक भिन्नता है। दक्षिणी और पश्चिमी भारत की तुलना में उत्तरी और पूर्वी भारत में साक्षरता दर कम है। देश में सर्वाधिक साक्षरता केरल में है। इस राज्य में लगभग निरक्षरता का उन्मूलन हो गया है। लेकिन बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश में साक्षरता की स्थिति बहुत दयनीय है। उदाहरण के लिए इन चारों राज्यों के 72 जिलों में 10–14 वर्ष के अधिकांश बच्चे निरक्षर हैं। यह तथ्य काफी चिंताजनक है। किसी क्षेत्र विशेष में आमतौर पर आर्थिक रूप से पिछड़े और वंचित समुदायों में साक्षरता दर कम पाई जाती है। इसी प्रकार सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों – अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और मुस्लिम समुदाय में साक्षरता दर अपेक्षाकृत कम है। यहां तक कि किसी विशेष आय के स्तर पर भी इन पिछड़े समुदायों के बच्चे अन्य बच्चों की तुलना में विद्यालयों में कम ही संख्या में दाखिल हो पाते हैं।

वस्तुतः प्राथमिक शिक्षा का लोक–व्यापीकरण कुल मिलाकर अभी स्वप्न ही बना हुआ है तथा इसको साकार करने की दिशा में काफी रास्ता तय करना बाकी है। आजादी के पचपन वर्ष बीतने के बाद भी इसकी मंजिल अभी भी दूर ही दिखाई देती है। 1993 में यूनेस्को की एक रिपोर्ट में 87 विकासशील देशों में शिक्षा की स्थिति की तुलना की गई थी। उस रिपोर्ट में शिक्षा प्रगति के क्रमानुसार भारत का 50वां स्थान था। यही नहीं, राज्यों की दृष्टि से भी प्राथमिक शिक्षा की प्रगति असमानता और विषमता से भरी है।

प्राथमिक शिक्षा को मूलभूत अधिकार बनाने के प्रस्ताव के नतीजों पर राज्य के शिक्षा मंत्रियों की एक समिति की रिपोर्ट में कहा गया है कि उपलब्ध जानकारियों के अनुसार 6 से 10 वर्ष तक की आयु वर्ग के लगभग तीन करोड़ तीस लाख बच्चे निरक्षरता के अंधकार में अपना जीवन गुजार रहे हैं। सबसे घनी आबादी वाले राज्य उत्तर प्रदेश की सरकार ने स्वयं स्वीकार किया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 800 की आबादी और कम से कम तीन किलोमीटर की दूरी पर उच्च प्राथमिक विद्यालय व्यवस्था के मानक के अनुसार अभी भी लगभग 2000 विद्यालयों की आवश्यकता है। प्रदेश के 40 प्रतिशत बच्चे आज भी उच्च प्राथमिक शिक्षा से वंचित हैं। यहां बालक एवं बालिका विद्यालयों के मध्य क्रमशः 4 तथा 1 का अनुपात है।

शैक्षिक गुणवत्ता की दृष्टि से भी वर्तमान में संचालित प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालयों का स्तर निम्न है। प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में न तो बच्चों के सामान्य जीवन के क्रियाकलापों को और न ही उनके परिवेश से सीखने के कारकों को सम्मिलित किया गया है। प्राथमिक व उच्च प्राथमिक स्तर पर जो पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं, वह अत्यंत बोझिल और अव्यावहारिक हैं तथा छात्रों के व्यक्तित्व विकास एवं उनके भविष्य से भी उनका कोई तारतम्य नहीं है। लगभग सारे देश में प्रारंभिक शिक्षा की स्थिति एक सी है।

स्वतंत्रता के पश्चात देश में शिक्षा के क्षेत्र में सुधार के लिए समय–समय पर अनेक समितियां और आयोग बनाए गए। लेकिन विद्यालयीय शिक्षा में गुणात्मक सुधार के संबंध में पहली बार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के पूर्व अध्यक्ष प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में मार्च, 1992 में एक समिति का गठन किया गया। इस समिति का कार्य विद्यालयीय छात्रों पर शैक्षिक बोझ कम करने तथा उनको दी जा रही शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार संबंधी उपाय सुझाना था। यशपाल समिति ने अपनी रिपोर्ट 15 जुलाई, 1993 को प्रस्तुत कर दी। इस समिति का पूरा जोर सूचनात्मक ज्ञान के बजाय विश्लेषणात्मक ज्ञान पर है। स्कूली विद्यार्थियों पर पाठ्यक्रमों का बोझ, शिक्षा–परीक्षा की नीरसता, व्यक्तिगत किस्म की प्रतियोगिता के बदले बच्चों में सामूहिक भावना का विकास, वातावरण तथा समाज से बच्चों का जीवंत रिश्ता जैसे अनेक विषयों पर इस रिपोर्ट में कम और आसान शब्दों में चर्चा की गई है।

विद्यालयी शिक्षा और मौलिक सोच रखने वाले देश के प्रबुद्ध वर्ग को यह आशा थी कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय इस रिपोर्ट को व्यावहारिक रूप देने का कार्य प्रारंभ करेगा, परंतु हुआ इसके ठीक विपरीत। यह रिपोर्ट अभी प्रकाशित भी नहीं हो पाई थी कि तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री ने शिक्षा विभाग के अपर सचिव वाई.एन. चतुर्वेदी की अध्यक्षता में 25 अगस्त, 1993 को एक नई समिति का गठन कर डाला, जिसका काम यशपाल समिति की सिफारिशों को लागू करने की संभाव्यता की जांच करना था। जांच दल ने शीघ्रातिशीघ्र दो बैठकें करके करीब डेढ़ माह में ही अपनी रिपोर्ट पेश कर दी। अंततः निष्कर्ष यह निकला कि यशपाल समिति की ज्यादातर सिफारिशें अव्यावहारिक और गैर–जरूरी हैं। कुछ ऐसी हैं जिन्हें लागू करने के लिए अधिक समय की जरूरत है।

विश्वभर के लगभग सभी शिक्षाशास्त्री और वैज्ञानिक आज एकमत हैं कि बस्ते का भार कम होना चाहिए। फिर सवाल उठता है कि वे कौन से लोग हैं या वे कौन सी शक्तियां हैं जो बस्ते का बोझ बढ़ाए रखने के लिए ही कटिबद्ध हैं? ऐसी क्या मजबूरी है कि जान–बूझकर प्राथमिक शिक्षा को बोझिल, उबाऊ और नीरस बनाए रखा जा रहा है? यशपाल समिति ने जब आकर्षक और व्यावहारिक शिक्षा के संबंध में रिपोर्ट दी तो इसी भारतीय प्रबुद्ध वर्ग ने इसे अव्यावहारिक कहकर अस्वीकृत कर दिया था। इसके मूल में हमारे समाज का वह अभिजात्य वर्ग है जो

जानबूझकर शोषित निर्धन वर्ग के बच्चों को शिक्षा से दूर रखना चाहता है। समाज का अभिजात्य वर्ग और मध्यवर्ग जो मौजूदा व्यवस्था का अधिक से अधिक लाभ उठाने की कोशिश में है, क्या वे चाहेंगे कि गरीब बच्चे विद्यालय तक पहुंचें? आज का अभिजात्य तथा मध्यम वर्ग अपने निजीगत स्वार्थों के कारण उन वर्गों की शिक्षा में कोई विशेष रुचि नहीं रखता। यही कारण है कि आज भी प्रारंभिक शिक्षा अपने अपेक्षित मूलभूत उद्देश्य को प्राप्त करने में असफल रही है। जहां तक प्रारंभिक शिक्षा के मूलभूत ढांचे का सवाल है, इसमें किसी खास सुधार के लक्षण दिखाई नहीं देते।

समस्यात्मक घटक

शिक्षा आयोग (1964–66) ने प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण की प्राप्ति के मार्ग में आने वाली समस्याओं को निम्नांकित रूप में उल्लिखित किया है :

- पर्याप्त साधनों की कमी,
- जनसंख्या में भारी वृद्धि,
- बालिकाओं की शिक्षा में रुकावटें,
- पिछड़ी जातियों के बच्चों की अधिक संख्या,
- आम जनता की गरीबी, तथा
- माता–पिता की निरक्षरता और उदासीनता।

इन मूलभूत कारणों के परिणामस्वरूप भारतीय संविधान द्वारा निर्दिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति संभव नहीं हो सकी। इसके अतिरिक्त और भी ऐसे व्यावहारिक कारण हैं जिन्होंने प्रारंभिक शिक्षा के विकास और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित किया है। ये कारण अधोलिखित हैं :

अपव्यय तथा अवरोधन की समस्या

प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के मार्ग में अपव्यय अवरोधन की समस्या सबसे गंभीर बाधा है। कक्षा 1 से 5 पर अपव्यय की मात्रा लड़कों में लगभग 56 प्रतिशत और लड़कियों में लगभग 62 प्रतिशत है। इसी तरह अवरोधन की मात्रा कक्षा 1 में लड़कों पर 40.3 प्रतिशत व लड़कियों पर 47.1 प्रतिशत है।

प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण होने से पहले ही लगभग 70 प्रतिशत बच्चे विद्यालय छोड़ देते हैं। भारतीय शैक्षिक योजना और प्रशासन संस्थान (नीपा), नई दिल्ली ने विद्यालयों में छात्रों के पढ़ाई छोड़ने के पांच कारण बताए हैं :

- पारिवारिक या घरेलू कार्य,
- विद्यालय की असुविधाजनक स्थितियां,
- अनुपयुक्त समय,
- शिक्षा के प्रति उदासीनता और
- शिक्षा को समझ पाने में कठिनाई।

महिला अशिक्षा

सुप्रसिद्ध समाजसेविका दुर्गाबाई देशमुख का कहना था कि एक लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है, जबकि एक लड़की की शिक्षा एक पूरे परिवार की शिक्षा है। उक्त कथन से स्पष्ट है कि स्त्रियों की अशिक्षा ही शिक्षा के लोकव्यापीकरण में सबसे बड़ी बाधा है। स्त्री अशिक्षा के पीछे सामाजिक–आर्थिक कारणों के अतिरिक्त अन्य कारण भी हैं। बाल–विवाह, दहेज, स्वास्थ्य, श्रम भागीदारी आदि अनेक कारण सामाजिक तौर पर स्त्रियों को शिक्षा से दूर रखते रहे हैं। आर्थिक दबाव ने भी अपना प्रकोप स्त्रियों पर ही दिखाया है। एक सर्वेक्षण के आधार पर लगभग 69.4 प्रतिशत लड़कियां कक्षा एक के बाद और लगभग 72.8 प्रतिशत लड़कियां कक्षा दो के बाद स्कूल जाना छोड़ देती हैं। इसके अधिकांश कारण सामाजिक एवं आर्थिक हैं।

योग्य शिक्षकों का चयन न होना

अधिकतर योग्य और प्रशिक्षित शिक्षकों का चयन न होने के कारण विद्यालयी शिक्षण में गुणात्मकता का अभाव देखने को मिलता है। शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में शिक्षकों की रुचि, उनकी क्षमता, विषयवस्तु की तैयारी, संप्रेषण क्षमता तथा शिक्षण विधि का महत्वपूर्ण स्थान है परंतु वर्तमान समय में शिक्षकों में इन सभी गुणों का अभाव देखने को मिलता है। शिक्षकों की शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के प्रति बढ़ती उदासीनता के कारण अपव्यय और अवरोधन की समस्या विद्यालयों में निरंतर बढ़ रही है। शिक्षा में गुणवत्ता की धुरी शिक्षा की गुणवत्ता में समाहित है। इसीलिए शिक्षकों के चयन के समय निष्पक्षतापूर्ण दृष्टिकोण को अपनाते हुए निर्धारित मापदंडों को महत्व देना होगा ताकि शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में योग्य और क्षमतावान लोग आ सकें।

उपयुक्त प्रशिक्षण का अभाव

बिना किसी शैक्षिक प्रशिक्षण के शिक्षकों की सीधी भर्ती करके विद्यालयी शिक्षा को संचालित करने के प्रयास से शिक्षा के स्तर में गिरावट आई है। बिना किसी तकनीकी ज्ञान और शिक्षण–कौशल के अभाव में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाना कठिन है। वर्तमान में मध्य प्रदेश में शिक्षाकर्मियों और शिक्षा गारंटी योजना में नियुक्त 'गुरुजी' की सीधी भर्ती के कारण शिक्षा के प्रसार में वृद्धि तो हुई है परंतु दूसरी ओर गुणात्मकता का अभाव भी देखने को मिला है। इसके अतिरिक्त सेवाकालीन शिक्षक–शिक्षा के अंतर्गत जो प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाते हैं उनमें सभी शिक्षक गंभीरतापूर्वक भाग नहीं लेते। जो शिक्षक लेते भी हैं उन्हें ज्ञान और कौशल के ही प्रशिक्षण दिए जाते हैं जबकि शिक्षक की गुणवत्ता में सुधार उनके अंतर्मन को शिक्षकीय अभिवृत्ति की ओर मोड़ने से प्राप्त हो सकता है। अतः अभी भी कोई प्रशिक्षण ऐसा व्यापक रूप नहीं ले सका है जो शिक्षकों की सोच तथा दृष्टि में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन ला सके।

बालकेंद्रित शिक्षण विधि का प्रयुक्त न होना

पाठ्यक्रम में बालकेंद्रित शिक्षण विधि का प्रावधान होने पर भी सामान्यतः शिक्षक कक्षा में बच्चों की संख्या अधिक होने के कारण परंपरागत ढंग से ही शिक्षण करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में तो उपयुक्त संसाधनों एवं प्रशिक्षण के अभाव में विद्यालयों में यथास्थिति बनी हुई है। जहां एकल शिक्षक विद्यालय है वहां तो शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया की स्थिति और निम्न है। अतः प्रारंभिक कक्षाओं में बालकेंद्रित शिक्षण विधि पर आधारित अधिगम प्रक्रिया ही होनी चाहिए तभी बच्चे शिक्षा के लाभ प्राप्त कर

सकेंगे और शिक्षा में गुणात्मक सुधार संभव हो सकेगा।

पाठ्यक्रम

प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम पूर्णतः अव्यावहारिक एवं दोषपूर्ण है। बाल मनोविज्ञान पर आधारित न होकर बस्ते के बोझ के आधार पर अब पाठ्यक्रम का स्तर आंका जाने लगा है। बच्चे की रुचि, क्षमता, मानसिक योग्यता एवं शिक्षा के माध्यम को दरकिनार कर पाठ्यसामग्री से उसके बचपन को लाद दिया जाता है जो कि न तो जीवनपरक है, और न ही मूल्यपरक।

भौतिक और सामाजिक दूरी

गांवों में सुदूर बिखरे परिवारों के लिए प्राथमिक विद्यालय की दूरी अभी भी मूल समस्या बनी हुई है। प्राकृतिक बाधाएं जैसे – राजस्थान में रेतीले प्रदेश, पर्वतीय प्रदेश, कुछ प्रदेशों में भारी वर्षा आदि भी प्राथमिक शिक्षा की प्रगति में बाधक हैं। इनके कारण विद्यालय तक आने–जाने की समस्या विकट हो जाती है क्योंकि गांवों में आवागमन के साधनों का प्रायः अभाव रहता है।

आबादी से विद्यालय की भौतिक दूरी के साथ–साथ सामाजिक दूरी पर भी विचार करने की आवश्यकता है। अनेक सामाजिक बाधाओं के कारण विद्यालय जाने के इच्छुक बच्चे भी विद्यालय तक नहीं पहुंच पाते हैं। उदाहरण के लिए अनेक क्षेत्रों में गांव की आबादी छोटे–छोटे टोलों में बंटी होती है। विद्यालय किसी एक टोले में स्थित होता है। जातीय तनाव के कारण एक टोले के बच्चे दूसरे टोले में स्थित विद्यालय में नहीं जा पाते। ग्रामीण भारत में आधे टोलों में ही प्राथामिक विद्यालय हैं। उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में तो केवल 30 प्रतिशत टोलों में ही विद्यालय है। बालिकाओं के लिए घर से बाहर जाने पर प्रतिबंध सामाजिक दूरी की समस्या को गंभीर बनाता है।

पर्याप्त संसाधनों का अभाव

सूचना और प्रौद्योगिकी के इस गतिशील युग में जहां एक ओर सूचना और तकनीकी ज्ञान को आज शिक्षा में प्राथमिक आवश्यकता के रूप में स्वीकार किया जाने लगा है, वहीं प्रारंभिक विद्यालयों की स्थिति पर दृष्टिपात करें तो वहां पर सूचना और तकनीकी ज्ञान की बात तो कोसों दूर, विद्यालय चलाने के लिए पर्याप्त भौतिक संसाधन के नाम पर ब्लैक बोर्ड तक उपलब्ध नहीं हैं जिसके कारण शिक्षकों में शिक्षण के प्रति अरुचि देखने को मिलती है।

उच्च प्राथमिक विद्यालयों का अभाव

विद्यालय की भौतिक सुविधाओं का मूल्यांकन करते समय 14 वर्ष की आयु तक सार्वभौमिक शिक्षा के संवैधानिक लक्ष्य पर विचार करना बहुत आवश्यक है। इसके लिए केवल प्राथमिक विद्यालय की सुविधाएं ही आवश्यक नहीं हैं बल्कि आठवीं कक्षा तक उच्च प्राथमिक विद्यालय की सुविधाएं भी आवश्यक हैं। इसको ध्यान में रखकर अगर हम प्राथमिक विद्यालय से उच्च प्राथमिक विद्यालय की सुविधाओं को देखते हैं तो यह शिक्षा के मूलभूत ढांचे की आवश्यकता के रूप में एक बड़ी समस्या उभरकर सामने आती है।

रोजगारपरक शिक्षा का अभाव

यद्यपि सरकारी नीति के द्वारा शिक्षा के प्रसार हेतु काफी प्रयास किए गए हैं जिनमें निःशुल्क शिक्षा सामग्री से लेकर निःशुल्क भोजन, कपड़ा इत्यादि भी सम्मिलित हैं फिर भी शिक्षा के लोकव्यापीकरण की मंजिल अभी दूर है। इसका प्रमुख कारण है शिक्षा को व्यवसाय के साथ न जोड़ पाना। एक सीधा स्पष्ट प्रश्न है – 'पढ़ लिखकर करोगे क्या?, इस एक प्रश्न का उत्तर आज हमारे शिक्षाविदों के पास भी नहीं है। उच्च शिक्षा प्राप्त छात्रों को व्यवसायशून्य देखना शिक्षा–पद्धति पर नकारात्मक प्रभाव डालता है।

जनसमुदाय में सजगता का अभाव

प्रारंभिक शिक्षा के विकास में जनसमुदाय की अहम भूमिका होती है। परंतु वर्तमान में, विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों में (निम्न, पिछड़े एवं आदिवासी क्षेत्रों में) अभी भी जनसमुदाय में शिक्षा के प्रति सजगता का अभाव देखने को मिलता है। ऐसे परिवार बड़ी संख्या में आज भी समुदाय में हैं जो बच्चे की शिक्षा आवश्यक नहीं मानते। आर्थिक समस्याओं से ग्रसित निर्धन वर्ग शिक्षा की अपेक्षा अर्थोपार्जन को अपने जीवन की प्राथमिक आवश्यकता मानता है। इसलिए निर्धन माता–पिता अपने बच्चों को काम पर भेजना अधिक उचित समझते हैं, न कि विद्यालय भेजना।

प्रारंभिक शिक्षा में व्याप्त विसंगतियों को व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। शासकीय प्राथमिक विद्यालयों में कमरों की कमी, शिक्षकों की कमी, न्यूनतम सुविधाओं का अभाव, शिक्षकों के वेतन में असमानता, शिक्षा के प्रति प्रतिबद्ध शिक्षकों का अभाव, अन्य व्यवसायों की भांति शिक्षण व्यवसाय के स्तर में गुणात्मकता का अभाव, शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम का प्रभावी न होना, अभिभावकों की अशिक्षा, पंचायत प्रतिनिधियों में अशिक्षा तथा उपयुक्त प्रशिक्षण का अभाव, असंतोषजनक प्रशासनिक व्यवस्था और शिक्षण कार्यों के बढ़ते बोझ एवं अन्य कारणों से शिक्षकों में व्याप्त असंतोष आदि ने शिक्षा व्यवस्था को पूर्णतः जर्जर कर दिया है। इसका परिणाम अत्यंत चिंताजनक है। बच्चों की उपस्थिति के बावजूद कहीं शिक्षक नहीं हैं तो कहीं शिक्षक के अनुपात में बच्चों की उपस्थिति नगण्य रहती है।

वर्तमान में यह है प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण का मूर्तरूप लेता स्वरूप, जिसमें गुणवत्ता का कहीं समावेश दृष्टिगोचर नहीं होता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा के विकास एवं गुणवत्ता को प्रभावित करने वाले इन समस्यात्मक बिंदुओं और कारकों के निवारण हेतु सघन प्रयास एवं सार्थक कदम उठाए जाएं तभी शिक्षा के मूलभूत ढांचे को जर्जर होने से बचाया जा सकता है और संवैधानिक लक्ष्य प्राप्त किए जा सकते हैं। ❑

प्रवक्ता, शिक्षा विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट, पोस्ट–नयागांव
जिला–सतना मप्र – 485331

93वां संविधान संशोधन

सभी को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की दिशा में एक महत्वाकांक्षी कदम

डा. उमेश चंद्र अग्रवाल

संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 45 में यों तो 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था किए जाने की अपेक्षा की गई है लेकिन राज्य सरकारें अपने इस दायित्व को आजादी के 54 वर्षों के बाद भी अभी तक निभा नहीं पाई हैं। 93वें संविधान संशोधन के अनुसार सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक दशाएं, व्यवस्थाएं और सुविधाएं उपलब्ध कराना सरकार का तथा बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए उन्हें विद्यालय भेजने का दायित्व माता–पिता और अभिभावकों पर डाला गया है।

संसद द्वारा वर्ष 2001 के अंतिम चरण में 93वें संविधान संशोधन विधेयक को पास किए जाने से देश में 6 से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को आठवीं तक की निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की सुनिश्चित व्यवस्था किए जाने का मार्ग प्रशस्त हुआ है। इस संविधान संशोधन के जरिये प्राथमिक शिक्षा को बच्चों के मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किए जाने की चिर–प्रतीक्षित अभिलाषा पूरी होने के साथ–साथ बच्चों के माता–पिता अथवा अभिभावकों द्वारा अपने बच्चों को विद्यालय भेजना अनिवार्य किए जाने से यह उनका उत्तरदायित्व भी हो जाएगा। इस प्रकार अब देश में सभी बच्चों को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराना सरकार और अभिभावकों की सम्मिलित जिम्मेदारी हो जाएगी। उल्लेखनीय है कि हमारे संविधान के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 45 में यों तो 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था किए जाने की अपेक्षा की गई है लेकिन राज्य सरकारें अपने इस दायित्व को आजादी के 54 वर्षों के बाद भी अभी तक निभा नहीं पाई हैं। संविधान लागू होने के 43 वर्षों बाद सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वर्ष 1993 में किए गए हस्तक्षेप से प्राथमिक शिक्षा को सभी के लिए अनिवार्य बनाने हेतु इसे नागरिकों के मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किए जाने की दिशा में कुछ हलचल हुई है और सरकार को विशेष प्रयास करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों के अनुपालन में लगभग 4 वर्ष बाद वर्ष 1997 में 83वां संविधान संशोधन विधेयक संसद में पेश किया गया था। ताकि प्राथमिक शिक्षा को नागरिकों के मौलिक अधिकारों में समाहित किया जा सके। इस संविधान विधेयक को सरकार द्वारा अभी तक पास नहीं कराया जा सका है। इसके 4 वर्ष बाद अब नए रूप में 93वें संविधान संशोधन विधेयक को पास कराने के प्रति प्रतिबद्धता प्रदर्शित की गई और इसमें सफलता भी अर्जित की गई है। इस प्रकार, 93वें संविधान संशोधन के अनुसार सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक दशाएं, व्यवस्थाएं और सुविधाएं उपलब्ध कराना सरकार का तथा बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए उन्हें विद्यालय भेजने का दायित्व माता–पिता/अभिभावकों पर डाला गया है। यद्यपि वर्तमान सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के मद्देनजर अभी ऐसा नहीं कर पाने पर उन्हें दंडित करने की व्यवस्था नहीं रखी गई है।

देश में प्राथमिक शिक्षा की सर्वसुलभता हेतु अब तक किए गए विभिन्न प्रयासों पर यदि एक नजर डालें तो इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि इन प्रयासों के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अब तक देश में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था के लिए संचालित विभिन्न प्रकार की शिक्षण संस्थाओं, शिक्षकों और विद्यार्थियों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। प्राथमिक शिक्षा हेतु संचालित विद्यालयों की संख्या में इस अवधि में 4 गुनी से भी अधिक की वृद्धि हुई है। वर्ष 1950–51 में देश में प्राथमिक विद्यालयों की कुल संख्या 2 लाख 31 हजार थी, वह वर्ष 1998–99 तक बढ़कर 9 लाख, 30 हजार से

भी अधिक हो गई है। इसी प्रकार प्राथमिक विद्यालयों में विद्यार्थियों के नामांकन में यह वृद्धि 6 गुनी हुई है। वर्ष 1950–51 में यह संख्या मात्र एक करोड़ 92 लाख थी जो अब तक बढ़कर 11 करोड़ से भी अधिक पहुंच गई है। उच्च प्राथमिक स्तर पर इस अवधि के दौरान विद्यार्थियों के नामांकन में 13 गुनी वृद्धि हो सकी है जबकि लड़कियों के नामांकन में तो लगभग 32 गुनी अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इस समय देश में प्राथमिक स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में 94 प्रतिशत बस्तियों में एक किलोमीटर के दायरे में पांचवीं तक के स्कूल उपलब्ध हैं साथ ही मिडिल स्तर पर यह सुविधा 84 प्रतिशत गांवों में उपलब्ध है अर्थात स्कूलों तक पहुंच अब कोई खास समस्या नहीं रह गई है। आगे और भी अच्छी स्थिति होने की आशा की जा सकती है। केंद्र सरकार ने गत वर्ष "सर्वशिक्षा अभियान" नामक एक अतिमहत्वाकांक्षी अभियान की घोषणा कर इसके माध्यम से देश की सभी बस्तियों और गांवों में प्राथमिक विद्यालयों की उपलब्धता सुनिश्चित करके, शत–प्रतिशत बच्चों का नामांकन तथा 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को विद्यालयों में 8वीं कक्षा पास करने तक बनाए रखने का संकल्प व्यक्त किया है जिससे इस दिशा में और भी अधिक प्रगति की संभावनाएं बनी हैं। अब 93वें संविधान संशोधन विधेयक के पास हो जाने के फलस्वरूप सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य किए जाने से प्राथमिक शिक्षा के लिए अधिक अनुकूल स्थितियां पैदा हो जाएंगी। यहां एक बात और भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि देश में आजादी के बाद से साक्षरता दर में निरंतर वृद्धि हुई है लेकिन साथ ही निरक्षरों की संख्या भी लगातार बढ़ी है। वर्ष 2001 की जनगणना के मुताबिक पिछले 54 वर्षों में पहली बार निरक्षरों की संख्या में लगभग 3 करोड़ की कमी आई है लेकिन अभी भी इनकी संख्या करीब 35 करोड़ के आसपास है। इस प्रकार प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विद्यालयों, शिक्षकों और विद्यार्थियों की कुल संख्या की दृष्टि से देश में यद्यपि उल्लेखनीय उपलब्धि है लेकिन अभी तक 6 से 14 वर्ष के आयु वर्ग के 20 करोड़ बच्चों में से लगभग 6 करोड़ 90 लाख बच्चे विद्यालय नहीं जा पा रहे हैं। इनमें से 3.5 करोड़ लड़कियां और 2.5 करोड़ लड़के हैं। अभी भी देश में कम से कम एक लाख बस्तियां ऐसी हैं जहां एक किलोमीटर की दूरी के भीतर स्कूल उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त स्कूलों का अपर्याप्त मूलभूत ढांचा, उनका असंतोषप्रद कार्य, वहां शिक्षकों की अनुपस्थिति, शिक्षकों की रिक्तियों की अधिक संख्या, इन सबके परिणामस्वरूप शिक्षा का असंतोषजनक स्तर तथा सरकार द्वारा शिक्षा को समुचित महत्व प्रदान नहीं करने के कारण अपर्याप्त वित्तीय संसाधन जैसी अनेक वजहें प्राथमिक शिक्षा की सर्वसुलभता में बाधक तत्व रही हैं। इससे अभी तक देश में प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण संभव नहीं हो सका है।

प्राथमिक शिक्षा की वर्तमान वास्तविक स्थिति के संबंध में प्रकाशित व्यावहारिक आंकड़ों को देखने से इसकी और भी अधिक निराशाजनक तस्वीर सामने आती है जैसे – राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली के छठे सर्वेक्षण, 1996 के अनुसार देश में केवल 50 प्रतिशत बस्तियों – जिनमें 73 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है, में ही प्राथमिक विद्यालय उपलब्ध हैं। इनमें से अधिकांश विद्यालयों में वे न्यूनतम सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं हैं जो कि शिक्षा प्राप्त करने के लिए आवश्यक होती हैं। देश में आज भी लगभग यही परिस्थितियां विद्यमान हैं। इस

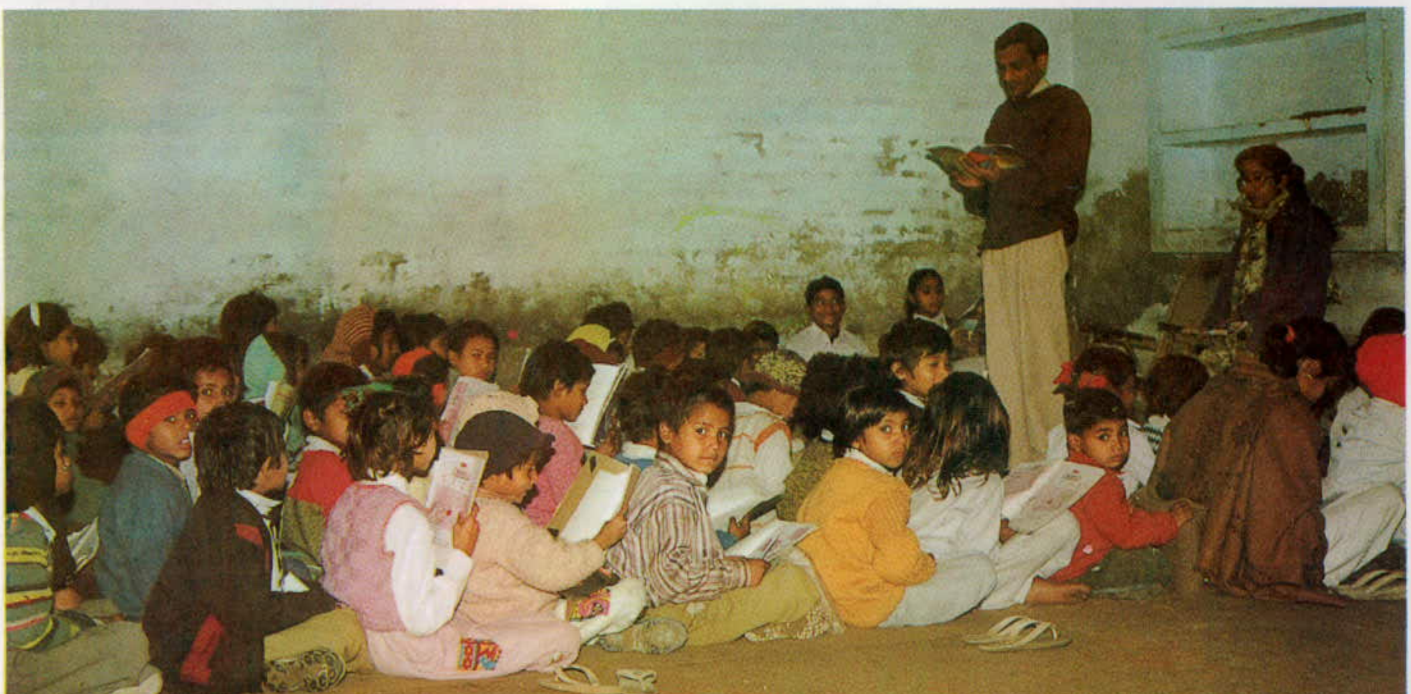

संबंध में हाल ही में किए गए एक अन्य सर्वेक्षण के अनुसार देश के ग्रामीण क्षेत्रों में 82 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालयों में आवश्यकतानुसार कमरे भी उपलब्ध नहीं हैं। देश के 45 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालय या तो बिना भवन के हैं या कच्चे–पक्के भवनों अथवा खुले मैदानों में चल रहे हैं। 37 प्रतिशत विद्यालयों में तो एक ही कमरा उपलब्ध है और लगभग एक तिहाई विद्यालयों में मात्र एक ही अध्यापक कार्यरत है। इसके अतिरिक्त 65 प्रतिशत विद्यालयों में टाट–पट्टी तथा आवश्यक फर्नीचर तक का अभाव है। 99 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालयों में एक भी समाचारपत्र मंगाने की व्यवस्था नहीं है और 97 प्रतिशत विद्यालय बिना शौचालयों के तथा एक तिहाई विद्यालय बिना चॉक एवं डस्टर के चल रहे हैं।

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ी कठिनाई

उत्तर प्रदेश में

उत्तर प्रदेश में चल रहे एक लाख 14 हजार प्राथमिक विद्यालय में दो लाख 36 हजार बच्चों के नामांकित और अध्ययनरत रहने के बावजूद अभी भी शिक्षा से वंचित रहने वाले बच्चों की विशाल संख्या है। प्रदेश सरकार द्वारा इस तथ्य को स्वीकारते हुए प्रदेशभर के 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी अवशेष बच्चों को स्कूल लाने का अभियान जुलाई 2001 से प्रारंभ किया गया जिसे 'स्कूल चलो अभियान' का नाम दिया गया। इस अभियान की एक विशेष बात यह है कि इसमें बच्चे के नामांकन के साथ–साथ पूरे सत्र–पर्यंत उसकी उपस्थिति बनाए रखने के लिए सभी आवश्यक कदम उठाए जाने का प्रावधान किया गया है। साथ ही इस अभियान की संरचना तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि यह केवल सरकारी कार्यक्रम न रहे बल्कि इसे एक बड़े जनांदोलन का रूप दिया जा सके।

इस अभियान के अंतर्गत गत वर्ष जुलाई में 54 लाख बच्चे विभिन्न प्राथमिक विद्यालयों में नामांकित कराए गए। इन बच्चों में से जो गरीब परिवारों के थे और जो शिक्षा का बोझ उठाने की स्थिति में नहीं थे, उनके बच्चों को बिना किसी शुल्क के पुस्तकों के साथ–साथ अन्य शैक्षिक सामग्री भी उपलब्ध कराई गई। जिन गांवों में विद्यालय उपलब्ध नहीं थे वहां प्राथमिक विद्यालय भी खोले गए। गत एक वर्ष में 1,099 नए प्राथमिक विद्यालय तथा 718 उच्च प्राथमिक विद्यालय खोले गए हैं। कुल मिलाकर गत वर्ष 'स्कूल चलो अभियान' काफी सफल रहा और अब इस कार्यक्रम को पूरे जोश–खरोश के साथ पूरे राज्य में क्रियान्वित किया जा रहा है।

अभियान के उद्देश्य

स्कूल चलो अभियान को एक बड़े जनांदोलन के रूप में चलाए जाने का प्रयास किया जा रहा है ताकि स्कूल जाने योग्य आयु वर्ग का कोई भी बालक विद्यालय जाने से वंचित न रहे। संक्षेप में इस अभियान के निम्नांकित लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं :

- प्रदेश भर में 6 से 14 वर्ष तक की आयु के ऐसे सभी बच्चों को जो विद्यालय नहीं जा पा रहे हैं, प्राथमिक विद्यालयों में नामांकित कराना।
- विद्यालयों में नामांकित सभी बच्चों की सत्र–पर्यंत शत–प्रतिशत उपस्थिति सुनिश्चित करना।
- सभी बच्चों को प्राथमिक स्तर की गुणवत्ता युक्त शिक्षा प्रदान किया जाना सुनिश्चित करना।
- बालिकाओं और अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चों की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना।
- विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों के शिक्षण–कौशल में उन्हें उपयुक्त प्रशिक्षण प्रदान कर अभिवृद्धि सुनिश्चित करना।
- प्राथमिक शिक्षा के प्रचार–प्रसार और उचित व्यवस्था में जन–समुदाय की भागीदारी प्राप्त करना।
- वर्ष 2010 तक कक्षा 1 से 8 तक की शिक्षा का प्रदेश भर में सार्वजनीकरण सुनिश्चित करना।

अभियान की रणनीति

उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इस अभियान को दो चरणों में बांटा गया है। प्रथम चरण में शिक्षा के प्रति जनसामान्य की रुचि जाग्रत करने के लिए वातावरण सृजन व जनजागृति के कार्यक्रम चलाए गए हैं। स्कूल न जाने वाले तथा बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले बच्चों की पहचान तथा उन्हें उत्प्रेरित करने हेतु आवश्यक व्यवस्थाएं भी सुनिश्चित की गई हैं। अभियान के द्वितीय चरण में स्कूल न जाने वाले चिन्हित बच्चों का नामांकन, बीच में शिक्षा छोड़ देने वाले बच्चों का पुनः प्रवेश तथा विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तकों तथा आवश्यक स्टेशनरी आदि का निःशुल्क वितरण जैसी व्यवस्थाएं सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। इस अभियान के अंतर्गत चालू वित्तीय वर्ष में 1,210 प्राथमिक विद्यालय तथा 360 उच्च प्राथमिक विद्यालय खोलने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है ताकि अधिक से अधिक गांवों में प्राथमिक और उच्च प्राथमिक विद्यालयों की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सके। उल्लेखनीय है कि प्रदेशभर में शिक्षा के सार्वजनीकरण हेतु सरकार द्वारा 2,500 करोड़ रुपये का अतिरिक्त निवेश किया गया है ताकि प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में महसूस की जा रही आर्थिक संसाधनों की पर्याप्त रूपेण आपूर्ति संभव हो सके।

प्रदेशभर में 300 की आबादी वाले प्रत्येक

बच्चों के विद्यालय में नामांकित हो जाने के बाद विद्यालय छोड़ देने की है। देशभर में कक्षा 1 से 5 तक लगभग 50 प्रतिशत और कक्षा 6 से 8 तक लगभग 72 प्रतिशत बच्चे शिक्षा पूर्ण किए बिना ही विद्यालय छोड़ जाते हैं और इस प्रकार शत–प्रतिशत नामांकन प्राप्त करने के सारे प्रयास असफल रह जाते हैं। विभिन्न राज्यों में यद्यपि यह दर अलग–अलग है लेकिन कुछ राज्यों जैसे बिहार, मेघालय, नगालैंड, मणिपुर आदि में यह दर 70 प्रतिशत या इससे भी अधिक है।

प्राथमिक शिक्षा के संबंध में अनुसूचित जाति, जनजाति, और बालिकाओं आदि की स्थिति और भी बदतर है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चों के संबंध में किए गए एक सर्वेक्षण में पाया गया कि अनुसूचित जाति के ग्रामीण विद्यार्थियों का प्रतिशत मात्र 29 है। इसी प्रकार बालिकाओं की स्थिति

स्कूल चलो अभियान

गांव में अथवा 1.5 किलोमीटर के अर्द्धव्यास को मानक मानते हुए प्राथमिक विद्यालय की स्थापना सुनिश्चित की गई है ताकि बच्चों को प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए अधिक दूर न चलना पड़े। बच्चों को रुचिपूर्ण शिक्षा प्रदान करने की दिशा में नवीन और आकर्षक पाठ्य पुस्तकों का विकास किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रदेश भर के प्राथमिक विद्यालयों में सभी बालिकाओं और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के सभी बालकों को निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण सुनिश्चित किया गया है। इस योजना के अंतर्गत इस वर्ष 97 लाख बच्चों को लाभान्वित किया गया है। विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों को सरकार द्वारा पर्याप्त प्रोत्साहन और उनके कार्यस्तर में गुणात्मक अभिवृद्धि के लिए भी कोशिशें की गई हैं। सर्वाधिक ध्यान प्रदेश में चल रहे एक लाख 14 हजार प्राथमिक विद्यालयों में नामांकित नहीं हो पाने वाले बच्चों को विद्यालय पहुंचाने पर केंद्रित है और विशेष अभियान चलाकर ऐसे सभी संभव प्रयास किए जा रहे हैं कि विद्यालय जाने योग्य सभी बच्चे हर हालत में विद्यालयों में दाखिल हो सकें। सभी प्राथमिक विद्यालयों में निर्धारित मात्रा में कक्षा–कक्ष, शिक्षक, सुरक्षित पेयजल, शौचालय, शिक्षण सामग्री जैसी मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक कदम उठाए गए हैं।

'सभी के लिए शिक्षा परियोजना' के अंतर्गत प्रदेश में 49 जिलों में विभिन्न प्रकार की बाह्य सहायता योजनाएं संचालित की गई हैं। इन योजनाओं में बेसिक शिक्षा परियोजना तथा जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम प्रमुख हैं। प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से मध्यान्ह भोजन योजना को वर्ष 1995 में प्रारंभ किया गया था। इस योजना के अंतर्गत प्रदेश सरकार द्वारा प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ रहे एक करोड़ से भी अधिक बच्चों को खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाता है। 'शिक्षा गारंटी योजना' के अंतर्गत प्रदेश में अभी तक प्राथमिक विद्यालय से वंचित प्रत्येक गांव में ग्राम पंचायतों के माध्यम से प्राथमिक विद्यालय खोलने के प्रयास किए गए हैं। इसके अंतर्गत ऐसे किसी भी गांव में जहां 30 बच्चे पढ़ने के लिए उपलब्ध हैं, वहां संबंधित ग्राम पंचायत द्वारा एक अस्थायी विद्यालय स्थापित किया जा रहा है। प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों की कमी को पूरा करने के लिए प्रदेश सरकार द्वारा 'शिक्षा मित्र योजना' भी संचालित की गई है। इस योजना के अंतर्गत स्थानीय स्तर पर उपलब्ध न्यूनतम इंटरमीडिएट तक की शैक्षिक योग्यता रखने वाले नवयुवकों और नवयुवतियों को 2,250/– रुपये के निर्धारित मासिक मानदेय पर शिक्षण कार्य हेतु नियुक्त किए जाने की व्यवस्था की गई है। इन शिक्षा मित्रों में 50 प्रतिशत स्थानीय महिलाओं के लिए आरक्षित रखने का प्रावधान भी है। इस योजना के अंतर्गत लगभग 40 हजार बेरोजगार शिक्षित युवक–युवतियों को रोजगार के अवसर प्राप्त होंगे।

इनके अतिरिक्त हाल ही में भारत सरकार द्वारा घोषित 'सर्व शिक्षा अभियान' के अंतर्गत प्रदेश में विशेष रूप से प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने हेतु विशेष प्रयास किए जाने का निर्णय लिया गया है। इस वर्ष प्रदेश सरकार द्वारा 'प्रदेश शिक्षा नीति' तैयार की जा रही है। प्रदेश की अपनी शिक्षा नीति बन जाने से प्रदेश में समुचित शैक्षिक विकास के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था, विभिन्न क्षेत्रों एवं वर्गों की आवश्यकताओं के अनुरूप उपयोगी योजनाएं, गुणात्मक शिक्षा के लिए समुचित प्रयास, समुचित शैक्षिक विकास हेतु उपयुक्त प्रकार से शैक्षिक नियोजन, उत्तरदायित्वपूर्ण शैक्षिक प्रबंधन एवं परीक्षा पद्धति में सुधार लाने हेतु विशेष प्रयास किया जाना संभव हो सकेगा। लेकिन इस अभियान में सफलता प्राप्त करने हेतु आवश्यक होगा कि सरकार द्वारा शिक्षा के विकास हेतु चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों को पूरी निगरानी और सख्ती के साथ लागू किया जाए ताकि इन योजनाओं का लाभ निर्धारित बच्चों तक पहुंच सके। सभी योजनाओं और कार्यक्रमों के लिए आवश्यक वित्तीय व्यवस्था समयानुसार सुनिश्चित किया जाना भी नितांत आवश्यक है तभी उनका भली–भांति क्रियान्वयन सुनिश्चित हो सकेगा। इसके अतिरिक्त विभिन्न शैक्षिक योजनाओं और कार्यक्रमों के संचालन में आ रही कठिनाइयों और निराकरण की पक्की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। इस अभियान की सफल्ता के लिए इसमें जनसहयोग और जनसहभागिता प्राप्त किया जाना भी परमावश्यक है। इसके लिए चुनी हुई त्रिस्तरीय पंचायतों और श्रेष्ठ स्तर की स्वयंसेवी संस्थाओं का भरपूर योगदान प्राप्त किया जाना श्रेयस्कर होगा। ❑

डा. उमेश चन्द्र अग्रवाल

शिक्षा के प्रत्येक वर्ग में काफी दयनीय है। सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति की 60 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजाति की 75 प्रतिशत बालिकाएं अपनी प्राथमिक शिक्षा भी पूरी नहीं कर पातीं। नगरों से तुलना करने पर यह अंतर और भी अधिक बढ़ जाता है जिसके अनुसार 38 प्रतिशत ग्रामीण तथा 29 प्रतिशत नगरीय बालकों की तुलना में क्रमशः 57 प्रतिशत व 36 प्रतिशत बालिकाएं अपनी स्कूली पढ़ाई अधूरी छोड़ देती हैं।

देश में प्राथमिक शिक्षा की दयनीय स्थिति का एक अन्य सर्वेक्षण के नतीजों से भी अनुमान लगाया जा सकता है। इसके अनुसार 6 वर्ष तक के 80 प्रतिशत से अधिक बच्चे सरकारी प्रयासों और अभिभावकों में शिक्षा के प्रति पैदा हुई जागरूकता के कारण विद्यालय में तो प्रवेश ले लेते हैं किंतु इनमें से 20 प्रतिशत से भी अधिक की उपस्थिति नियमित नहीं होती। 6 से 10 वर्ष तक की आयु के लगभग 70 प्रतिशत बच्चे नियमित रूप से स्कूल जाते हैं लेकिन इनमें से एक तिहाई प्राथमिक शिक्षा पूरी किए बिना ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। 1986 से 1993 के बीच लड़कियों के नामांकन में यद्यपि 20 प्रतिशत की वृद्धि अंकित की गई किंतु इन 8 वर्षों में प्रवेश लेकर शिक्षा जारी रखने वालों की दर इसी अनुपात में नहीं बढ़ सकी है। वर्तमान वृद्धिदर को आधार बनाते हुए 10वीं पंचवर्षीय योजना के अंतिम वर्ष 2007 तक केवल 6 से 11 वर्ष की आयु के ही सभी बच्चों को स्कूल भेजने के लिए 13 लाख स्कूली कक्षाओं और 7 लाख 40 हजार नए शिक्षकों की आवश्यकता पड़ेगी जबकि वास्तविकता यह है कि मौजूदा प्राथमिक विद्यालयों में अभी वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप भी कमरे उपलब्ध नहीं हैं और जहां उपलब्ध हैं भी उनमें से अधिकांश ऐसे हैं जो निर्धारित मानकों के अनुरूप नहीं हैं, वे ऐसी जीर्ण–शीर्ण अवस्था में हैं जो न तो वर्षा के दिनों में बच्चों को पानी से बचा सकते हैं और न भयंकर शीत और गर्मी में सर्द और गर्म हवाओं से उनको सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं। अधिकांश विद्यालयों में शिक्षकों की बेहद कमी है। दूरदराज और दुर्गम क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय बहुत कम स्थानों पर उपलब्ध हैं और जहां विद्यालय हैं भी उनमें या तो शिक्षक नियुक्त नहीं हैं या फिर वे यदा–कदा ही विद्यालय में पढ़ाने के लिए जाते हैं।

प्राथमिक शिक्षा की सार्वभौमिकता में देश में व्याप्त गरीबी और उसके एक परिणाम के रूप में जारी बालश्रम प्रथा भी बाधक रही है। यद्यपि सरकारी या सरकारी अनुदान प्राप्त विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षा बिल्कुल निःशुल्क है लेकिन फिर भी दिल्ली स्कूल आफ इकोनामिक्स के शोधार्थियों द्वारा राजस्थान, मध्य प्रदेश, बिहार और उत्तर प्रदेश के कुछ चुने हुए क्षेत्रों में हाल ही में किए गए सर्वेक्षण के आधार पर एक बच्चे को सरकारी प्राथमिक विद्यालय में भेजने के लिए अभिभावक को प्रतिवर्ष 366 रुपये खर्च करने पड़ते हैं। उन लाखों परिवारों के लिए जिनमें स्कूल जाने वाले कई बच्चे हों, उन पर यह एक आर्थिक बोझ भी है जिसे वे सामान्य परिस्थितियों में उठा ही नहीं सकते। विशेष रूप से यह आर्थिक बोझ लड़कियों की पढ़ाई को अधिक प्रभावित करता है जहां माता–पिता यह मानते हैं कि लड़कियों की शिक्षा का लाभ लड़की की ससुराल वाले उठाएंगे तो फिर अनावश्यक खर्चा हम क्यों करें! अभी भी अनेक गांव और बस्तियां ऐसी हैं जहां कई–कई किमी. तक प्राथमिक विद्यालय नहीं हैं। इन परिस्थितियों में चाहते हुए भी अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय भेजने में असमर्थ रहते हैं और

परिणामस्वरूप निरक्षरों की संख्या में वृद्धि होती रहती है।

अब 93वें संविधान संशोधन विधेयक के पारित हो जाने से प्राथमिक शिक्षा के लिए सभी आवश्यक व्यवस्थाएं भली–भांति सुनिश्चित करना कानूनी रूप से भी सरकार का पूर्ण दायित्व हो गया है। अतः सबसे पहले सरकार द्वारा इस संविधान संशोधन को लागू करने में आने वाली कठिनाइयों और बाधाओं का ईमानदारीपूर्वक पूर्वानुमान लगा उनके निराकरण हेतु सभी आवश्यक व्यवस्थाएं सुनिश्चित करने पर सबसे अधिक ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। यद्यपि इस बारे में समुचित जानकारी प्राप्त करने के लिए विभिन्न वर्गों और स्तरों पर गहनतापूर्वक विचार–विमर्श और विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता होगी लेकिन इस संबंध में त्वरित रूप से अनुभवों के आधार पर मुख्य समस्याओं और बाधाओं का पूर्वानुमान किया जा सकता है। जैसे इस संबंध में पहली प्रमुख कठिनाई समयानुसार और समुचित रूप में आवश्यक वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने की हो सकती है। इसके अतिरिक्त अभिभावकों और शिक्षकों का अपेक्षित सहयोग और उनमें समर्पण की भावना, विशेष रूप से अभावग्रस्त राज्य सरकारों का प्राथमिक शिक्षा के प्रति अनुत्तरदायित्वपूर्ण रवैया, राजनैतिक एवं प्रशासकीय प्रतिबद्धता की कमी, अरुचिपूर्ण, अव्यावहारिक और बोझिल पाठ्यक्रमों के फलस्वरूप बच्चों का स्कूलों में कम ठहराव जैसी अन्य प्रमुख समस्याएं भी इसको प्रभावित करेंगी। इन समस्याओं के निराकरण के लिए सरकार को आवश्यक वित्तीय संसाधनों के सतत प्रवाह की समुचित व्यवस्था, क्रियान्वयन मशीनरी पर कठोर नियंत्रण, लापरवाही और अनियमितता बरतने वालों के लिए दंडात्मक कार्यवाही की त्वरित व्यवस्था, अभिभावकों में शिक्षा के प्रति जागरूकता लाने के लिए आवश्यक प्रचार, बच्चों के लिए रोचक और व्यावहारिक पाठ्यक्रमों एवं पाठ्यपुस्तकों का सृजन, सरकारी मशीनरी के साथ स्वैच्छिक संगठनों, त्रिस्तरीय पंचायतों, नागरिक संगठनों तथा समाज के प्रत्येक वर्ग का सामंजस्य और सहयोग प्राप्त किए जाने हेतु राजनैतिक और प्रशासकीय प्रतिबद्धता सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता होगी।

अतः 93वें संविधान संशोधन में की गई व्यवस्थाओं के भली–भांति क्रियान्वयन और उसके द्वारा देश में सभी को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कुछ विशेष कदम भी उठाने की आवश्यकता है। इस दिशा में पहले कदम के रूप में सरकार को प्रत्येक दशा में देश के छोटे से छोटे गांव अथवा बस्ती में, चाहे वे दूरदराज के क्षेत्र हों, पहाड़ी और दुर्गम इलाके हों, रेगिस्तानी अथवा वनों से आच्छादित सुदूरवर्ती जनजातीय क्षेत्र हों, प्राथमिक विद्यालय सुलभ कराना परमावश्यक होगा। देश के सभी क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थापना और उनमें आवश्यक भौतिक सुविधाएं जुटाने के लिए धनाभाव एक प्रमुख समस्या मानी जाती रही है लेकिन इसकी महत्ता को स्वीकार करते हुए सरकार के लिए राजनैतिक और प्रशासकीय इच्छाशक्ति होने पर आवश्यक धन की व्यवस्था करना कोई कठिन और असंभव लक्ष्य नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार इसे अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय महत्व और सामाजिक क्रांति का एक अहम मुद्दा मानते हुए इसके लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध हो। अतः अब 93वें संविधान संशोधन को लागू करने के लिए सबसे पहले देश के सभी क्षेत्रों में विद्यालयों की उपलब्धता और इन विद्यालयों में शिक्षकों की आपूर्ति सहित सामान्य रूप से आवश्यक भौतिक सुविधाएं जुटाने के लिए समुचित व्यवस्था किया जाना नितांत अनिवार्य होगा। इस कार्य में सरकार द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत स्वयंसेवी संगठनों, स्थानीय शहरी निकायों और त्रिस्तरीय ग्रामीण पंचायतों का भी भरपूर सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए। देश में 73वें और 74वें संविधान संशोधन के पारित हो जाने के बाद यद्यपि प्राथमिक शिक्षा को तो पूर्णतः पंचायतों के अधीन करने के प्रावधान किए गए हैं और इस दिशा में विभिन्न राज्यों द्वारा आवश्यक कदम उठाए भी गए हैं लेकिन वास्तविक रूप में पंचायतों का इन विद्यालयों पर प्रभावी नियंत्रण अब तक संभव नहीं हो पाया है। अब 93वें संविधान संशोधन के क्रियान्वयन में ऐसी व्यवस्था निर्धारित की जानी चाहिए और दूसरे महत्वपूर्ण कदम के रूप में सरकार को प्राथमिक शिक्षा की संपूर्ण व्यवस्था चुनी हुई त्रिस्तरीय पंचायतों के सुपुर्द कर देनी चाहिए। इसमें आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता प्रारंभ में सरकार को ही सुनिश्चित करनी होगी और समन्वय एवं पर्यवेक्षण की प्रभावी व्यवस्था भी करनी पड़ेगी लेकिन शनैः शनैः इसे पूर्णतया पंचायतों के ऊपर छोड़ा जाना चाहिए। पंचायतीराज संस्थाओं को प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था का उत्तरदायित्व सौंपा जाना इसलिए भी अधिक कारगर होगा कि इससे स्थानीय लोगों के प्रति जवाबदेही को सुनिश्चित किया जाना संभव हो सकेगा। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षकों के विद्यालय न जाने और शिक्षण कार्य न करने जैसी शिकायतों के निराकरण पर भी कार्यवाही पंचायतों द्वारा अधिक प्रभावी होगी। प्राथमिक शिक्षा पंचायतों को सुपुर्द किए जाने से एक और विशेष लाभ यह होगा कि विद्यालय भवनों के निर्माण और अनुरक्षण आदि पर किए जाने वाले व्यय में अच्छी–खासी कमी लाना संभव हो सकेगा क्योंकि पंचायतें स्थानीय रूप से उपलब्ध निर्माण सामग्री का प्रयोग करके विद्यालय भवनों का निर्माण एवं समुचित देखभाल और अपनत्व का भाव रखने के कारण कम खर्च में इसे संभव कर सकेंगी। अतः हर हालत में ग्राम पंचायतों को कम से कम प्राथमिक शिक्षा का संपूर्ण प्रबंध, व्यवस्था और उत्तरदायित्व सुपुर्द किया जाना अति व्यावहारिक, उपयोगी एवं कारगर होगा।

इस क्षेत्र में तीसरा प्रमुख कदम 93वें संविधान संशोधन में की गई व्यवस्थाओं और उसकी भावनाओं के अनुरूप पूरे देश में प्राथमिक शिक्षा को सही मायनों में अनिवार्य बनाकर उठाया जाए। इस संबंध में पिछले अनुभव बताते हैं कि इससे पहले भी कुछ राज्यों ने प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के लिए पहल के रूप में अनिवार्य शिक्षा अधिनियम पारित किए हैं। केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा संसद में दिए गए बयान के मुताबिक अभी भी 20 राज्यों में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य है और अभिभावकों द्वारा अपने बच्चों को स्कूल न भेजने पर दंड

के प्रावधान हैं यद्यपि वे प्रतीकात्मक हैं। लेकिन वास्तविक रूप में इनका क्रियान्वयन संभव नहीं हो सका है क्योंकि इन व्यवस्थाओं को लागू नहीं कर सकने के पीछे दो प्रमुख कारण उत्तरदायी रहे हैं। पहला प्रमुख कारण तो सभी क्षेत्रों में विद्यालय की अनुपलब्धता रहा है और दूसरा कारण है देश में व्याप्त गरीबी के कारण स्कूल जाने योग्य बच्चों को आर्थिक कार्यों में लगाए रखना तथा शिक्षा पर होने वाले व्यय का बोझ उठाने की उनकी असमर्थता। लेकिन अब प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने से पूर्व सभी क्षेत्रों में विद्यालयों की उपलब्धता और प्राथमिक शिक्षा को पूर्ण रूप से निःशुल्क करने के साथ गरीबों के लिए पोषक आहार, पाठ्य सामग्री और वेष–भूषा तक की व्यवस्था करते हुए गरीब परिवारों को सरकार की विभिन्न कल्याणकारी और विकास योजनाओं से लाभान्वित कर बच्चों पर उनकी आर्थिक निर्भरता को समाप्त करना होगा, तभी अभिभावक भी निःसंकोच होकर अपने बच्चों को विद्यालय भेजने हेतु तत्पर हो सकेंगे और 93वें संशोधन की भावनाओं के अनुरूप देश में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य पूरा हो सकेगा।

इस संबंध में चौथा महत्वपूर्ण कदम प्राथमिक शिक्षा को एक सघन अभियान के रूप में चलाकर जन सहयोग और जन सहभागिता को प्राप्त किया जाना है। यद्यपि गत वर्ष से सरकार द्वारा 'सर्वशिक्षा अभियान' के नाम से घोषित प्राथमिक शिक्षा के प्रचार–प्रसार का एक व्यापक कार्यक्रम प्रारंभ किया गया है जिसके अंतर्गत वर्ष 2010 तक देश के सभी बच्चों को 8वीं तक अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित भी किया गया है। लेकिन अन्य व्यवस्थाओं के साथ–साथ इसके प्रचार–प्रसार की भी समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए। सरकारी एवं गैरसरकारी प्रचार माध्यमों को इस दिशा में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करना होगा। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में शिक्षा के प्रति जनसामान्य की जागरूकता में काफी वृद्धि हुई है लेकिन अभी इस दिशा में और अधिक प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

प्राथमिक शिक्षा के आधार को विस्तृत, सर्वव्यापी और सर्वस्वीकार्य बनाने के लिए पांचवें महत्वपूर्ण कदम के रूप में सरकारी प्राथमिक विद्यालयों के स्तर और कार्यशैली में गुणात्मक सुधार हेतु आमूल–चूल परिवर्तन किया जाना चाहिए और साथ ही साथ अभिभावकों और शिक्षकों का आर्थिक शोषण करने वाले तथाकथित पब्लिक, कान्वेंट, मांटेसरी अथवा माडल आदि नामों से प्रचलित निजी विद्यालयों पर प्रभावी अंकुश और नियंत्रण रखने की भी आवश्यकता है। व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के तौर पर अधिकाधिक लाभार्जन के उद्देश्य से चलाए जा रहे इन विद्यालयों द्वारा बटोरे जा रहे विकास, भवन और शिक्षण आदि शुल्कों के नाम पर अनियंत्रित धन वसूली भी निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति में बाधक रही है और समय–समय पर समाज द्वारा इन विद्यालयों के अस्तित्व और वर्चस्व पर प्रश्नचिन्ह लगाए जाते रहे हैं। हालांकि वर्तमान जनतांत्रिक एवं खुली अर्थव्यवस्था में इसका बंद किया जाना तो उपयुक्त नहीं कहा जा सकता लेकिन इनके प्रशासन, धन वसूली, पाठ्यक्रम, पाठ्य–पुस्तकें, फीस आदि व्यवस्थाओं पर प्रभावी और कारगर निगरानी की व्यवस्था की जानी चाहिए। सुदृढ़ आर्थिक आधार वाले बच्चों के अभिभावकों से प्राथमिक शिक्षा की सर्वव्यापकता के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आर्थिक सहयोग लिया जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा के भारी–भरकम बोझ को उठाने के लिए सरकार इन विद्यालयों पर इनमें पढ़ने वाले बच्चों की संख्या के आधार पर 'शिक्षा कर' के रूप में कुछ धन वसूल कर सकती है जिसे सुदूर क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थापना और विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं की पूर्ति के लिए सहयोग राशि के रूप में भी प्राप्त किया जा सकता है। इसे 'भारत शिक्षा कोष' में जमा करके उसका भली–भांति सदुपयोग किया जाना संभव होगा। उल्लेखनीय है कि हाल ही में केंद्र सरकार द्वारा इस कोष की स्थापना करने की घोषणा की गई है जिसमें विभिन्न लोगों और संस्थाओं से शिक्षा के विकास हेतु अतिरिक्त स्रोत बनाने हेतु दान आदि प्राप्त करने का प्रावधान है।

विशेष प्रयास के रूप में सरकार आर्थिक कठिनाइयों को कम करने की दिशा में प्राथमिक शिक्षा को पूरी तरह निःशुल्क न करके इसे केवल उन गरीब लोगों के लिए निःशुल्क रख सकती है जो वास्तव में स्कूल का खर्च उठाने में समर्थ नहीं हैं। ऐसे लोग जो अपने बच्चों की शिक्षा का बोझ उठाने में सक्षम हैं उनसे किसी न किसी रूप में आर्थिक सहायता प्राप्त कर लिया जाना हर दृष्टि से उपयोगी होगा। इससे ऐसे अभिभावकों और उनके बच्चों में शिक्षा के लिए कद्र ज्यादा होगी और सरकार के लिए अतिरिक्त आर्थिक संसाधन' प्राप्त करने का एक अतिरिक्त मार्ग भी निकल आएगा। इस प्रकार प्राथमिक शिक्षा के लिए धनाभाव की कमी को कुछ हद तक दूर करने में मदद मिल सकेगी।

आशा है कि उपर्युक्त कदम उठाए जाने से 93वें संविधान संशोधन की भावनाओं के अनुरूप देश में सभी बच्चों को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने की दिशा में समुचित मार्ग प्रशस्त हो सकेगा क्योंकि अब तक पिछले पांच दशकों में सरकार द्वारा सर्वसुलभ और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के संबंध में जो भी व्यवस्थाएं निर्धारित की गईं अथवा नीतियां बनाई गईं, उनके क्रियान्वयन में अरबों–खरबों रुपये खर्च किए गए, सचल विद्यालय, चरवाहा विद्यालय, आश्रम पद्धति विद्यालय जैसे कुछ नवीन प्रयोगों और अनौपचारिक शिक्षा, आपरेशन ब्लैक बोर्ड, डीपीईपी, मध्यान्ह भोजन योजना, शिक्षा गारंटी तथा वैकल्पिक एवं नवोन्मेषी शिक्षा योजना, सर्वशिक्षा अभियान जैसे नए–नए कार्यक्रम और योजनाएं चलाकर भी लक्ष्य पूर्ति के प्रयास किए गए लेकिन इनके अभी तक उसी अनुपात में परिणाम नजर नहीं आ सके हैं। नई शताब्दी की चुनौतियों का सामना करने के लिए यह आवश्यक है कि अब पुराने प्रयोगों, अनुभवों और कमियों को न दोहराया जाए और 93वें संविधान संशोधन की व्यवस्थाओं के क्रियान्वयन के अंतर्गत कुछ ऐसे विशेष और ठोस प्रयास किए जाएं जिनमें असफलता की गुंजाइश नहीं के बराबर हो और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य कम से कम समय में प्राप्त किया जा सके। ❑

17–ए, इंसाफ नगर कालोनी
(हाईटेक इंस्टीट्यूट के पास)
सेक्टर–10, इंदिरा नगर
लखनऊ–226016

कितनी व्यावहारिक है शिक्षा नीति में सुधार की जरूरत

डा. आनंद किशोर

मुक्ति के लंबे संघर्ष के बाद भारत आजाद हुआ। देशवासियों में आशा जगी कि शिक्षा के क्षेत्र में एक ऐसी व्यवस्था कायम होगी जो राजा और रंक सभी के लिए समान होगी। मौजूदा शिक्षा नीति में जो गैरबराबरी की बातें हैं वे बिल्कुल समाप्त हो जाएंगी, परंतु ऐसा नहीं हुआ। आजादी के बाद हमारे रहनुमा यह भूल गए कि अंग्रेजों से इस धरती को क्यों मुक्ति दिलाई गई। अंग्रेजियत की शिक्षानीति बदस्तूर जारी रही।

आजादी के संघर्ष के दिनों में ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने शिक्षा के बुनियादी ढांचे के संबंध में अपने विचार दिए थे कि बिना किसी भेदभाव, जात–पांत एवं आर्थिक समृद्धि के सभी बच्चों के लिए समान शिक्षा की व्यवस्था हो। शिक्षा के संबंध में बापू का विचार था कि शिक्षा मातृभाषा में दी जाए। बापू ने श्रम एवं ज्ञान की शिक्षा को भी महत्व दिया। बापू चाहते थे कि शिक्षाव्यवस्था में विद्यार्थी समाज के लोगों एवं शिक्षकों के सबल सहयोग के साथ–साथ प्रशासनिक लोग भी शामिल रहें। बापू की बुनियादी शिक्षा की धारणा ग्राम आधारित एवं कृषि पर आधारित भारत के निर्माण की थी।

अंग्रेजीपरस्त शिक्षानीति की खामियों को महसूस करते हुए 1968 में एक राष्ट्रीय शिक्षानीति की घोषणा की गई। इस शिक्षानीति में शिक्षा पद्धति को पूर्णतः बदलने की बात कही गई थी जिससे वह सामान्य जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप हो, बढ़े हुए शैक्षिक

अवसर प्रदान कर सके, शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु गहन प्रयास किए जा सकें, विज्ञान तथा तकनीकी के विकास को भी बल मिल सकें, साथ ही नैतिक तथा सामाजिक मूल्यों का निर्माण भी हो सके। उक्त शिक्षा नीति का उद्देश्य एक ऐसा माहौल कायम करना था जिससे चरित्रवान, परिश्रमी एवं ज्ञानी नागरिकों की पीढ़ी तैयार हो जो देश के प्रति हर तरह से समर्पित हों।

लेकिन बापू की शिक्षा नीति, 1968 की शिक्षा नीति, कोठारी कमीशन से लेकर आचार्य राम मूर्ति कमीशन सहित आधे दर्जन कमीशनों की रिपोर्ट पर किसी प्रकार के अमल की गुंजाइश नहीं समझी गई। 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने शिक्षा जगत के खोखलेपन का जिक्र करते हुए शिक्षा में बुनियादी परिवर्तन का आह्वान किया। तब एक दस्तावेज तैयार किया गया। लोगों को आशा बंधी कि 77 पृष्ठीय दस्तावेज 'शिक्षा की चुनौती नीति संबंधी परिप्रेक्ष्य' आम लोगों की भावना के अनुकूल होगा। यह दस्तावेज शिक्षा, समाज और विकास, शैक्षिक विकास पर विहंगम दृष्टि, समीक्षात्मक मूल्यांकन और शिक्षा के स्वरूप के पुनर्निधारण के बारे में एक दृष्टिकोण जैसे चार अध्यायों में बंटा हुआ है। दस्तावेज के प्राक्कथन में अन्य बातों के अलावा यह भी कहा गया है कि यह शिक्षा पद्धति देश को 21वीं सदी में पहुंचाने जैसे दूरगामी परिणामों को प्राप्त करने के उद्देश्य से तैयार की गई है।

1985 की नई शिक्षानीति में प्राथमिक शिक्षा के विकेंद्रीकरण, उच्च शिक्षा के विशिष्टीकरण तथा उच्च स्तर में शिक्षा प्राप्त करने वालों के लिए शुल्क में बढ़ोतरी की बात कही गई थी। दस्तावेज में शिक्षण संस्थानों से राजनीति हटाने की बात भी कही गई।

प्रयोग से गुजरते शिक्षा जगत में डेढ़ दशक बाद फिर एक नई शिक्षा नीति की जरूरत महसूस की गई और इसके लिए देश के दो बड़े उद्योगपतियों मुकेश अंबानी और कुमार मंगलम बिड़ला की अगुआई में अप्रैल 2000 में *ए पालिसी फ्रेमवर्क फार रिफार्म्स इन एजुकेशन* शीर्षक से एक रिपोर्ट तैयार की गई। 14 वर्ष तक के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा की संवैधानिक प्रतिबद्धता तथा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा शिक्षा को एक बुनियादी हक, मानने के निर्णय को ध्यान में रखते हुए रिपोर्ट में प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क तथा अनिवार्य बनाने के साथ–साथ माध्यमिक शिक्षा को आवश्यक तथा अनिवार्य बताया गया है।

रिपोर्ट में शिक्षकों में सतत प्रशिक्षण तथा गुणवत्ता विकास, सूचना प्रौद्योगिकी तथा कंप्यूटर नेटवर्कयुक्त स्मार्ट स्कूलों की स्थापना, माध्यमिक तथा ऊपरी स्तर के छात्रों को व्यावसायिक शिक्षा देने की व्यवस्था, नैतिक शिक्षा पर जोर देने, स्कूल स्तर पर समान शिक्षा पद्धति लागू करने के साथ ही क्षेत्रीय स्तर पर भाषा, इतिहास एवं सांस्कृतिक विविधता पर ध्यान देने, शिक्षा के प्रबंधन को विकेंद्रित कर पंचायत की भागीदारी बढ़ाने, राष्ट्रीय प्रवेश परीक्षा आयोजित करने, शिक्षण संस्थानों तथा पाठ्यक्रम को बाजारोन्मुखी बनाने, सरकारी स्कूलों में भवन, दूरभाष तथा कंप्यूटर के लिए राशि मुहैया कराने और विश्वविद्यालयों को दी जाने वाली वित्तीय सहायता कम करके उन्हें आत्मनिर्भर बनाने का प्रस्ताव है।

रपट में स्पष्ट तौर पर कहा गया है कि शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम एवं सुविधाओं को बाजारोन्मुखी बनाया जाए ताकि निजी क्षेत्र का विकास हो सके क्योंकि भारतीय शिक्षा बाजारोन्मुखी नहीं है। उसे पूरी तरह बाजार के हवाले करने की वकालत की गई है।

इसी प्रकार सरकार की भूमिका प्राथमिक शिक्षा को राशि प्रदान कर उसे अनिवार्य एवं मुफ्त बनाने, माध्यमिक शिक्षा को आवंटन देकर अनिवार्य बनाने तथा चुने गए उच्च शिक्षण संस्थानों को आर्थिक सहयोग प्रदान करने, छात्रों को कर्ज दिलाने, विज्ञान, तकनीक प्रबंधन तथा वित्तीय क्षेत्रों में शिक्षा के लिए नए निजी विश्वविद्यालय खोलने के लिए अधिनियम बनाने, शिक्षा में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति देने, विदेशी छात्रों को आकर्षित करने, विश्वविद्यालय एवं अन्य शिक्षण संस्थानों में राजनीतिक गतिविधियों पर रोक लगाने, अर्थव्यवस्था को नियंत्रण मुक्त कराने की निधारित की गई है ताकि शिक्षा के लिए बाजार का विकास हो सके। शिक्षकों को एक निश्चित समय सीमा तक ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने तथा वंचित वर्ग के बच्चों को वैकल्पिक शिक्षा देने के लिए विविध कार्यक्रम चलाने इत्यादि रिपोर्ट के मुख्य बिंदु हैं।

अंबानी–बिड़ला द्वारा तैयार की गई यह रपट प्राथमिक शिक्षा के प्रति काफी संवेदनशील लगती है। आजादी के छठे दशक में ही सही संवैधानिक प्रतिबद्धता तथा सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश का स्मरण करते हुए जोरदार शब्दों में इसे मुफ्त तथा अनिवार्य बनाने पर जोर दिया गया है। रिपोर्ट में नैतिक शिक्षा पर जोर तथा समान शिक्षा पद्धति और शिक्षा के प्रबंधन में पंचायतों की भूमिका जैसी अच्छी बातों की चर्चा की गई है परंतु रपट को समग्र रूप से देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह स्पष्ट उदारीकरण के तहत शिक्षा जगत को निजी हाथों में सौंपने की तैयारी है। प्राथमिक शिक्षा के संबंध में भी उदारवादी सोच का मतलब यह लगाया जा रहा है कि अब प्राथमिक, माध्यमिक शिक्षा प्राप्त मजदूर ही सूचना प्रौद्योगिकी के विकास तथा बाजारीकरण के अन्य आयामों में फिट बैठ सकेंगे। वैसे प्राथमिक शिक्षा को भी निजी हाथों में सौंपने की स्थिति बन गई है। सरकारी विद्यालयों को अप्रासंगिक करार देने हेतु उसके समानांतर गांव–गांव में कुकुरमुत्ते की तरह निजी विद्यालय खुल रहे हैं। आम अभिभावक सरकारी विद्यालयों को हिकारत की नजर से देख रहे हैं। यह स्वयंमेव पैदा हुई स्थिति नहीं है।

रपट में स्पष्ट तौर पर कहा गया है कि शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम एवं सुविधाओं को बाजारोन्मुखी बनाया जाए ताकि निजी क्षेत्र का विकास हो सके क्योंकि भारतीय शिक्षा बाजारोन्मुखी नहीं है। उसे पूरी तरह बाजार के हवाले करने की वकालत की गई

है। रपट में उच्च शिक्षा को दी जाने वाली वित्तीय सहायता कम करने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर जोर देकर यही स्पष्ट किया गया है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में निजी विश्वविद्यालय खोले जाने के लिए एक विश्वविद्यालय विधेयक बनाने की सिफारिश की गई है। ये निजी विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा के नाम पर मनमानी फीस वसूलेंगे। रपट में यह भी बताया गया है कि सन् 2015 तक कुल पढ़ने वाले 45 करोड़ बच्चों में से 11 करोड़ उच्च शिक्षा के लायक होंगे जिनमें से मात्र 2.20 करोड़ ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। वरिष्ठ पत्रकार अरुण पाण्डेय ने इस शिक्षा के अर्थशास्त्र का विश्लेषण करते हुए कहा है कि उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले प्रत्येक छात्र को सालाना 35 हजार रुपये बतौर फीस व्यय करने होंगे और दैनंदिन खर्च, छात्रावास तथा अन्य खर्चों को जोड़ा जाए तो स्नातक स्तर पर डिग्री हासिल करने के लिए सालाना 1 से 1.50 लाख रुपये व्यय करने होंगे। अगर इंजिनियरिंग, मेडिकल तथा अन्य व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण करनी है तो उसे इस रकम से पांच गुना ज्यादा राशि खरचनी होगी। आने वाले समय में इस राशि में और बढ़ोतरी हो जाएगी। इतनी बड़ी राशि कोई संपन्न वर्ग का अभिभावक ही व्यय कर सकेगा। स्वाभाविक है कि गरीब तथा मध्यम वर्ग का छात्र उच्च शिक्षा से वंचित होगा। परिणामस्वरूप होनहार छात्र भी शिक्षा से वंचित रह जाएंगे। वैसे गरीब मेधावी छात्रों के लिए ऋण लेकर शिक्षा ग्रहण करने के प्रावधान की चर्चा है, स्वाभाविक है कि वह किस उम्मीद पर उतना ऋण प्राप्त करेगा क्योंकि उसके रोजगार की कोई गारंटी तो है नहीं। फिर ऋणजाल में फंसकर छटपटाने के सिवाय कोई चारा नहीं बचेगा। कला, संस्कृति, दर्शन, इतिहास, प्राकृतिक विज्ञान इत्यादि की शिक्षा को दोयम दर्जा प्राप्त होगा। अमरीका को छोड़कर अन्य सभी देशों की सरकारें उच्च शिक्षा पर होने वाले खर्चे को स्वयं वहन करती हैं फिर भारत जैसा विकासशील देश जहां एक तिहाई लोग गरीबी रेखा से नीचे वसर करते हैं तथा किसान तथा कर्मचारियों की स्थिति भी दयनीय बनी हुई है, इस प्रकार की सोच लोकतांत्रिक कल्याणकारी संविधान में फिट नहीं बैठती बल्कि गरीब एवं मध्यम वर्गों को शिक्षा ही नहीं मुख्यधारा से अलग रखने की स्थिति पैदा करती है। मौजूदा शिक्षा पद्धति में ही पिछड़े, दलित, कमजोर वर्ग का बड़ा हिस्सा शिक्षा से वंचित हो रहा है फिर नई शिक्षा नीति के लागू होने के बाद यही वर्ग हाशिये पर होगा।

अंत में यह भी स्पष्ट तौर पर रपट में कहा गया है कि अर्थव्यवस्था को नियंत्रण से मुक्त किया जाए जिससे शिक्षा के लिए बाजार का विकास हो सके। उपरोक्त कथन यह स्पष्ट करने को काफी है कि निजी क्षेत्र शिक्षा जगत को अधिकाधिक लाभकारी उद्योग के रूप में देख रहा है जिसमें देशी–विदेशी दोनों शक्तियां मिलकर मानव संसाधन की संस्कृति, संस्कार एवं सोच को अपने अनुकूल बदलने की योजना बना रही हैं। भारतीय पुरातनकालीन शिक्षा व्यवस्था आश्रमों की थी जिसमें संतों द्वारा न केवल सेवा, शासन, ज्ञान, चरित्र बल्कि राजनीति, यहां तक कि युद्ध तक की शिक्षा दी जाती थी और संतों के लिए राजा का दरबार ही नहीं सिंहासन भी खाली हो जाता था। आज भी देश की राजनीति, देशी–विदेशी मामले, वित्तीय तथा अन्य सभी क्षेत्रों में विश्वविद्यालयों के ज्ञानी प्राध्यापक अपनी राय तथा टिप्पणियों के माध्यम से आम जनता का मार्गदर्शन कर रहे हैं।

विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों से निकलने वाले छात्र एक साथ विज्ञान, भाषा, गणित, दर्शन सभी क्षेत्रों की जानकारी रखते थे परंतु बाजारीकरण की शिक्षा में उन्हें खास क्षेत्रों तक सिमटना पड़ेगा। बाजारीकरण से ज्ञान, शोध, धर्म, त्याग, चरित्र सेवा की भावना कम होगी।

विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों से निकलने वाले छात्र एक साथ विज्ञान, भाषा, गणित, दर्शन सभी क्षेत्रों की जानकारी रखते थे परंतु बाजारीकरण की शिक्षा में उन्हें खास क्षेत्रों तक सिमटना पड़ेगा। बाजारीकरण से ज्ञान, शोध, धर्म, त्याग, चरित्र सेवा की भावना कम होगी। प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा प्राप्त गरीब तथा मध्यम वर्ग के बच्चे देसी उद्यमियों तथा उच्च शिक्षा प्राप्त छात्र विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों तथा उद्योगपतियों के यंत्र के पुर्जे बनकर रहेंगे। अभी शिक्षा जगत में जो गिरावट और शिक्षण संस्थानों में जो अराजकता देखी जा रही है उसके लिए पश्चिमी देशों का अंधानुकरण एवं सरकारी नीतियां जवाबदेह हैं। बाजारीकरण की शिक्षा पद्धति से उपभोक्तावादी तथा भोगवादी संस्कृति को शह मिलेगी।

अतएव बाजारीकरण की इन रपटों को अमल में नहीं लाकर साहस के साथ देश में एक ऐसी शिक्षा नीति की आधारशिला कायम करनी होगी जो 90 प्रतिशत जनता की भावना के साथ अपने को जोड़ सके। शिक्षा रोजगारोन्मुखी होने के साथ ही अच्छे नागरिक पैदा कर सके। शिक्षा, ग्रामोत्थान, लघु कुटीर उद्योग से जुड़ी, श्रम सम्मान एवं ज्ञान प्रदान करने वाली हो।

यदि शिक्षित नागरिकों को एक समान बनाना है तो हमें अपनी नई पीढ़ी को बताना होगा कि अपनी विशिष्ट भारतीयता को विकसित तथा पल्लवित–पुष्पित करके ही हम मानवता के सर्वांगीण विकास में सहायता कर सकते हैं। संकीर्णता पश्चिम को एक मात्र आदर्श मानकर सारी मानव जाति को उसी ढर्रे में सीमित कर देने में है। सरकार को प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा को अलग–अलग देखने से परहेज करना होगा। सरकार को देश के न केवल शिक्षाशास्त्री बल्कि सभी क्षेत्रों के विशिष्ट लोगों, समाजसेवी तथा राजनीतिज्ञों की राय तथा बहस के आधार पर प्राथमिक से लेकर उच्च तथा तकनीकी शिक्षा के लिए एकमुश्त नीति तय करने का संकल्प करना चाहिए। ❑

व्याख्याता : अर्थशास्त्र विभाग
एस.एल.के. कालेज, सीतामढ़ी, बिहार

महात्मा गांधी सीडी

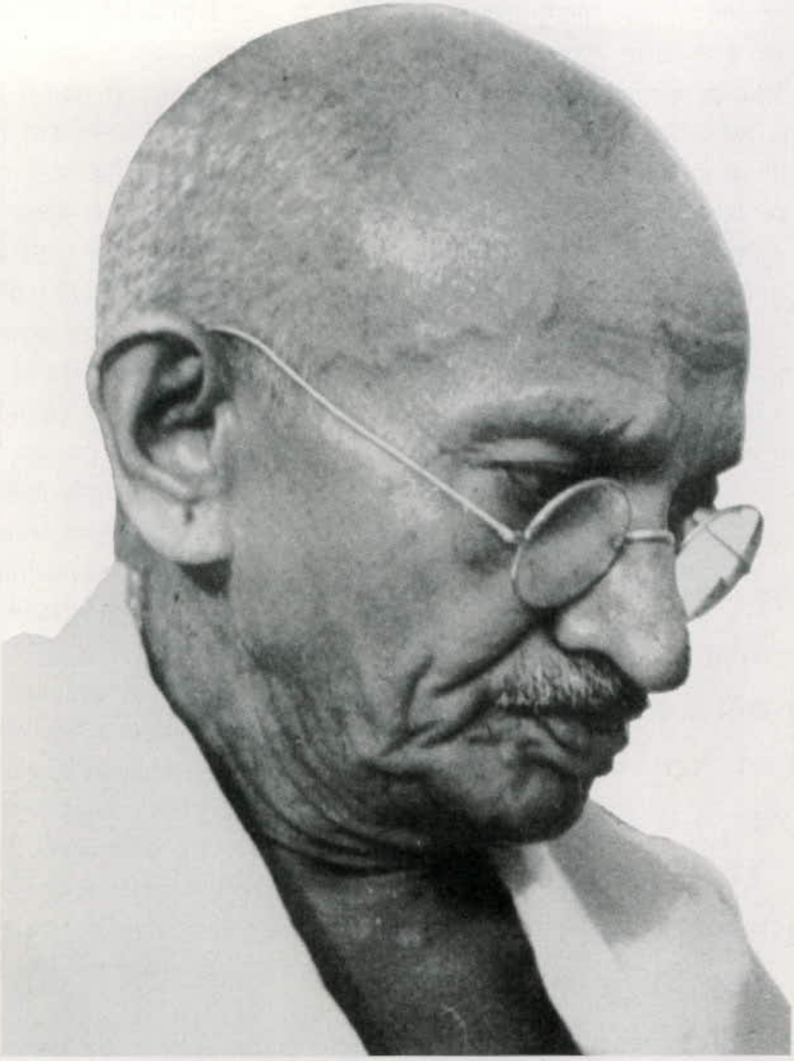

इस मल्टीमीडिया सीडी में
गांधीजी पर
30 मिनट की फिल्म फुटेज
550 से अधिक चित्र
करीब 15 मिनट की
गांधीजी की आवाज
और
इलेक्ट्रॉनिक बुक
में साठ हजार से अधिक पृष्ठों में
विस्तृत सांकेतिका के साथ
सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय
संकलित है

यह सीडी प्रकाशन विभाग द्वारा 100 खंडों में प्रकाशित सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय पर आधारित है।

मूल्य : 2000 रुपये

विक्रय और अन्य जानकारी के लिए संपर्क करें :

पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, ***नई दिल्ली**–110019;* सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, ***नई दिल्ली**–110001;* हॉल नं. 196, पुराना सचिवालय, ***दिल्ली**–110054;* कामर्स हाउस, करीमभाई रोड बालार्ड पायर, ***मुंबई**–400038;* 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, ***कोलकाता**–700069;* राजाजी भवन, बेसेंट नगर, ***चेन्नई**–600090;* बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, ***पटना**–800004;* प्रेस रोड, निकट गवर्नमेण्ट प्रेस, ***तिरुअनंतपुरम**–695001;* प्रथम तल, एफ विंग, केन्द्रीय सदन, कोरामंगला ***बंगलौर**–560034;* अम्बिका कॉम्प्लैक्स, प्रथम तल, पाल्डी, ***अहमदाबाद**–380007;* नवजन रोड, उजान बाजार, ***गुवाहाटी**–781001;* 27 / 6, राम मोहन राय मार्ग, ***लखनऊ**–226001;* ब्लॉक नं., 4, पहली मंजिल, ग्रुहाकल्पा कॉम्पलैक्स, एम.जे. रोड, नामपल्ली, ***हैदराबाद**–500001;* 80, मालवीय नगर, ***भोपाल**–462003;* सी.जी.ओ. काम्प्लैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, ***इंदौर**;* बी–7बी, भवानी सिंह मार्ग, ***जयपुर**–302001*

राजस्थान में साक्षरता की स्थिति

प्रकाश नारायण नाटाणी

जनगणना 2001 में राजस्थान की साक्षरता दर को 61.63 प्रतिशत आंका गया है। इसमें 1991 के मुकाबले में 22.48 प्रतिशत अधिक वृद्धि बताई गई है। निश्चय ही पिछले दशक में संपूर्ण देश में सर्वाधिक वृद्धिदर की उपलब्धि राजस्थान के लिए गौरव की बात है, किंतु फिर भी भारत के अन्य राज्यों की तुलना में राजस्थान को इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना है। साक्षरता की दृष्टि से राज्य के भिन्न–भिन्न जिलों में भी अंतर पाया गया है। इस ओर भी राज्य में प्रयत्न किए जाने आवश्यक हैं।

2001 की जनगणना में राज्य तथा केंद्र शासित प्रदेशों के वरीयता क्रम में साक्षरता की दृष्टि से व्यक्तिवार, पुरुष तथा महिलाओं की वरीयता में भी केरल ही प्रथम स्थान पर है जबकि तीनों दृष्टियों से अंतिम स्थान पर बिहार है। राजस्थान व्यक्तिवार साक्षरता की वरीयता में 29वें, पुरुष साक्षरता की वरीयता में 22वें तथा महिला साक्षरता की वरीयता में 29वें स्थान पर है।

जिलों में साक्षरता की दृष्टि से राजस्थान में कुल साक्षरता में कोटा, पुरुष साक्षरता में झुंझुनूं तथा स्त्री साक्षरता में भी कोटा ही प्रथम स्थान पर है जबकि व्यक्ति साक्षरता और पुरुष साक्षरता में बांसवाड़ा तथा स्त्री साक्षरता में जालौर अंतिम स्थान पर हैं।

कुल साक्षरता

राज्य में वर्ष 1951 से 2001 के बीच साक्षरता के प्रतिशत की राष्ट्रीय औसत से तुलना करने पर निम्नांकित स्थिति बनती है :

साक्षरता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	राष्ट्रीय औसत	राजस्थान
1951	16.67	8.95
1961	28.30	18.12
1971	34.45	22.57
1981	43.56	30.09
1991	52.21	38.55
2001	65.38	61.03

तालिका के अनुसार वर्ष 1951 से 2001 तक लगातार संपूर्ण भारत की औसत साक्षरता की तुलना में राजस्थान ने अधिक वृद्धि की है। राजस्थान की साक्षरता दर ने उत्तरोत्तर वृद्धि करके 1951 में जो फासला था उसे काफी हद तक पाट दिया है। जहां 1951 में भारत की औसत साक्षरता दर 16.67 प्रतिशत थी, वहां राजस्थान की 8.95 थी जो तुलनात्मक दृष्टि से आधी से कुछ ही अधिक थी, जबकि 2001 में यह प्रतिशत 65.38 के राष्ट्रीय औसत की तुलना में राजस्थान का 61.03 प्रतिशत बराबर के स्तर से थोड़ा ही कम है। इस दृष्टि से संपूर्ण देश की तुलना में राजस्थान के प्रयत्न सार्थक एवं प्रशंसा योग्य हैं।

पुरुषों की साक्षरता

राजस्थान में पुरुषों की साक्षरता की वर्ष 1951 से 2001 तक की स्थिति राष्ट्रीय औसत की तुलना में इस प्रकार है :

पुरुषों की साक्षरता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	राष्ट्रीय औसत	राजस्थान
1951	24.95	14.44
1961	40.39	28.08
1971	45.95	33.87
1981	56.37	44.76
1991	64.13	54.99
2001	75.85	76.46

राजस्थान ने पुरुष साक्षरता में भी संपूर्ण भारत की तुलना में अधिक वृद्धि दर्ज की है। वर्ष 1951 में राजस्थान में पुरुष साक्षरता 14.44 प्रतिशत थी जो समग्र भारत की साक्षरता दर (24.95 प्रतिशत) की तुलना में बहुत कम थी। यह धीरे–धीरे आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि करके वर्ष 2001 में संपूर्ण भारत की 75.85 प्रतिशत साक्षरता दर की तुलना में 76.46 प्रतिशत पर आकर 2001 में भारत में पुरुषों के राष्ट्रीय साक्षरता औसत को भी पार कर गई है। इसलिए देश के स्तर पर इसे साक्षरता का पुरस्कार भी मिला है। इस दिशा में राजस्थान का प्रयत्न निश्चित रूप से सराहनीय कहा जाना चाहिए।

स्त्रियों की साक्षरता

राष्ट्रीय औसत की तुलना में राजस्थान में स्त्रियों की साक्षरता दर इस प्रकार है :

स्त्रियों की साक्षरता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	राष्ट्रीय औसत	राजस्थान
1951	7.93	3.00
1961	15.33	7.10
1971	21.97	10.01
1981	29.75	13.99
1991	39.29	20.44
2001	54.46	44.34

वर्ष 1951 में देश में स्त्रियों की साक्षरता दर 7.93 प्रतिशत थी और उसकी तुलना में राजस्थान में यह दर मात्र तीन प्रतिशत पर आधे से भी कम थी। यह स्थिति वर्ष 1981 तक चलती रही। वर्ष 1981 की जनगणना के आंकड़ों में जहां संपूर्ण भारत में स्त्रियों की साक्षरता दर 29.75 प्रतिशत थी, वहीं राजस्थान में यह 13.99 प्रतिशत ही थी। वर्ष 2001 में करिश्माई छलांग लगाकर संपूर्ण भारत की स्त्री साक्षरता दर 54.46 की तुलना में 44.34 प्रतिशत प्राप्त करके इसने राष्ट्रीय औसत से मात्र 10 प्रतिशत की कमी दर्ज कराई।

आशा की जानी चाहिए कि राजस्थान साक्षरता के क्षेत्र में विशेष प्रयत्न कर 2011 तक अपना स्थान भारत की साक्षरता सारणी में सम्मानपूर्वक स्थान पर दर्ज करवा सकेगा। इससे न केवल स्त्रियों की साक्षरता दर और सुधरेगी, अपितु राज्य के संपूर्ण साक्षरता दर का आंकड़ा भी सम्मानजनक रूप से ऊंचा उठेगा। ❑

69/91, वीर तेजाजी रोड, मानसरोवर, जयपुर

मध्य प्रदेश में शिक्षा आंदोलन से बढ़ती साक्षरता

डा. बालमुकुंद बघेल

हम 21वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं। इस नई सदी के नए सपने और लक्ष्य हैं जिन्हें योजनाबद्ध तरीके से कार्य करते हुए ही प्राप्त किया जा सकता है। बीसवीं सदी का अंतिम दशक कई क्षेत्रों में एक संक्रमण काल रहा। भारत में जहां जुलाई 1991 से आर्थिक उदारीकरण, विश्वव्यापीकरण, बाजारीकरण के मार्ग को अपनाया गया है वहीं विगत एक दशक में प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण को बढ़ावा दिया गया है। इस प्रकार उदार अर्थव्यवस्था एवं प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण बीते दशक के दो प्रमुख क्रांतिकारी कदम रहे हैं। मध्य प्रदेश भी देश में बदलती व्यवस्थाओं से अप्रभावित नहीं रहा है। मध्य प्रदेश ने इस दौरान प्रजातांत्रिक विकेंद्रीकरण के मार्ग को अपनाकर देश में अपनी पहचान बनाई है। यहां संविधान के 73वें और 74वें संशोधन के बाद नई व्यवस्था के तहत त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव तथा नगरीय निकायों के चुनाव कराए गए हैं तथा ग्रामीण एवं शहरी जनता को सत्ता में सीधे भागीदार बनाया गया है। पंचायतीराज और नगरपालिका से जिला सरकार और ग्रामस्वराज तक मध्य प्रदेश में विकेंद्रीकरण की यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव हैं। विकेंद्रीकरण की यह व्यापक संरचना सामाजिक विकास के कार्यक्रमों को नई ऊर्जा और गति देने में सहायक सिद्ध हुई है, विशेष तौर पर निरक्षरता को दूर करने में प्रदेश अग्रणी रहा है। प्रदेश ने एक दशक में (1991–2000) साक्षरता के स्तर में 19.44 प्रतिशत की वृद्धि की है जिसे सामाजिक क्रांति ही कहा जाएगा। विगत चार दशक में प्रदेश की साक्षरता की स्थिति तालिका में देखी जा सकती है।

साक्षरता की स्थिति

वर्ष	साक्षरता प्रतिशत	वृद्धि प्रतिशत
1961	20.48	---
1971	26.37	5.89
1981	34.23	7.86
1991	44.67	10.44
2001	64.11	19.44

स्रोत : कार्यालय, संचालक आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचनालय, विंध्याचल भवन, भोपाल से संकलित।

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 1961–1991 के दौरान तीन दशकों में साक्षरता दर में 24 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई थी। जबकि 1991–2001 के दशक में साक्षरता का स्तर बढ़कर 19.44 प्रतिशत तक पहुंच गया है।

1990 के दशक में राष्ट्रीय साक्षरता के स्तर में 13 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस अवधि में मध्य प्रदेश ने न केवल राष्ट्रीय साक्षरता की बराबरी की, बल्कि पुरुष साक्षरता के मामले में भी यह राष्ट्रीय औसत को पार कर चुका है। 2001 के आंकड़ों के अनुसार मध्य प्रदेश की पुरुष साक्षरता 67.80 प्रतिशत है जो दक्षिण भारत के विकसित कहे जाने वाले राज्यों – कर्नाटक और आंध्र प्रदेश से क्रमशः 0.91 प्रतिशत एवं 5.59 प्रतिशत अधिक है। अब यदि प्रदेश में महिला साक्षरता की बात करें तो 1991–2001 के दशक में 20.93 प्रतिशत की रिकार्ड वृद्धि हुई है जो कि राष्ट्रीय साक्षरता वृद्धि से 6.06 प्रतिशत अधिक है। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रदेश में महिला एवं पुरुष साक्षरता में अंतर का प्रतिशत कम हुआ है। 1991 में यह अंतर जहां 29.29 प्रतिशत था, वर्ष 2001 में यह घटकर 26.52 प्रतिशत रह गया। इस प्रकार एक दशक (1991–2001) में पुरुष एवं महिला साक्षरता में अंतर का प्रतिशत 2.77 कम हुआ है जो एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। प्रश्न उठता है कि मध्य प्रदेश में विगत एक दशक में ऐसा क्या हो गया कि साक्षरता में अचानक 19.44 की वृद्धि हो गई तो इसके जवाब में रेखांकित करना होगा कि इसके पीछे मध्य प्रदेश शासन द्वारा अपनाई गई मिशन प्रणाली रही है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इस सफलता के पीछे शासन द्वारा शिक्षा के विकास एवं विस्तार के लिए चलाए जा रहे राजीव गांधी शिक्षा मिशन की सुनियोजित नीति रही है। मिशन ने एक ओर औपचारिक प्राथमिक शिक्षा की संरचना को मजबूत किया है तो दूसरी ओर शिक्षा की वर्तमान प्रणाली के पूरक के रूप में राज्य की आवश्यकताओं के अनुरूप समांतर शैक्षणिक कार्यक्रम योजनाबद्ध तरीके से बनाए और क्रियान्वित किए गए। शिक्षा एवं साक्षरता के विस्तार हेतु मिशन द्वारा उठाए गए प्रमुख कदम इस प्रकार रहे हैं;

शिक्षा गारंटी योजना

प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण की बुनियादी आवश्यकता को स्वीकार करते हुए जनवरी 1997 से समुदाय के सहयोग से नवाचारी शिक्षा गारंटी योजना (ईजीएस) प्रारंभ की गई है। इस योजना के अंतर्गत यह सुनिश्चित किया जाता है कि प्रत्येक बच्चे को उसके गांव अथवा रिहायशी इलाके में अथवा

एक किलोमीटर के दायरे में प्राथमिक स्कूल की सुविधा उपलब्ध हो। स्कूल की मांग करने पर समुदाय द्वारा 90 दिन के भीतर प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने की गारंटी है। स्थानीय लोगों को शिक्षक के रूप में पहचान कर पंचायत के माध्यम से उनकी नियुक्ति की जाती है। कोई भी गांव अथवा परिवार का समूह जहां स्कूल जाने योग्य कम से कम 25 बच्चे हों और जहां स्कूल की सुविधा न हो, एक ईजीएस स्कूल खोलने की मांग कर सकता है। मध्य प्रदेश में जुलाई 2001 तक 23,854 स्कूलों की स्थापना हो चुकी है। इन स्कूलों में अध्यापन कार्य के लिए 28,435 शिक्षकों की नियुक्ति तथा कुल 11,30,219 बच्चों की भर्ती की जा चुकी थी। ईजीएस विद्यार्थियों की सामाजिक संरचना के अंतर्गत कुल नामांकित बच्चों में 44 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के, 16 प्रतिशत अनुसूचित जाति के। तथा 32 प्रतिशत अन्य पिछड़ा वर्ग के थे। इनमें नामांकित लड़कियों का प्रतिशत 47 था। यदि जनसांख्यिकीय क्षेत्र के आधार पर देखा जाय तो इन बच्चों में 42 प्रतिशत बच्चे आदिवासी क्षेत्रों के थे। मध्य प्रदेश शासन की इस योजना को वर्ष 1998 में 'कापाम' का कामनवेल्थ इंटरनेशनल अवार्ड फार पब्लिक सर्विस प्राप्त हुआ है।

पढ़ना–लिखना आंदोलन

मध्य प्रदेश शासन द्वारा साक्षरता में वृद्धि के लिए चलाए जा रहे पढ़ना–लिखना आंदोलन को देश में सराहा जा रहा है तथा अन्य राज्यों द्वारा इसके अनुसरण किए जाने की योजना है। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के संपूर्ण साक्षरता अभियान के सीमित परिणाम को ध्यान में रखकर मध्य प्रदेश में एक रणनीति के तहत साक्षरता का कार्यक्रम पढ़ना–बढ़ना आंदोलन दिसंबर 1999 में प्रारंभ किया गया। इस आंदोलन के अंतर्गत निरक्षर व्यक्तियों की 2 लाख 17 हजार समितियों का गठन किया गया। इन समितियों ने पढ़े–लिखे स्थानीय व्यक्तियों को अपना गुरुजी बनाया। राज्य शासन ने शिक्षा मिशन के माध्यम से इन पढ़ना–बढ़ना समितियों के सदस्यों एवं गुरुजी का सत्यापन करके प्रशिक्षणार्थियों को पढ़ने की सामग्री तथा गुरुजी के प्रशिक्षण की व्यवस्था की। राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की तीन प्रवेशिकाओं के अलावा एक अधिकारों की प्रवेशिका भी तैयार की गई। यह प्रवेशिका लोगों को उनके अधिकारों के बारे में जानकारी देने, पढ़ना–बढ़ना समितियों को स्वसहायता समूहों में बदलने के उद्देश्य से बनाई गई है। चौथी प्रवेशिका में भूमि, जंगल, श्रम विकास के अधिकारों का समावेश किया गया है। पढ़ना–बढ़ना आंदोलन के द्वारा एक वर्ष में (1999–2000) में 30 लाख लोगों को साक्षर बनाया गया जबकि शिक्षा के लोकव्यापीकरण के संपूर्ण अभियानों में 1990–2000 के दौरान 54 लाख व्यक्ति ही साक्षर बन सके थे। इस प्रकार साक्षरता बढ़ाने की दिशा में पढ़ना–बढ़ना आंदोलन रामबाण औषधि साबित हुआ है। इस आंदोलन में संलग्न गुरुजी को प्रत्येक साक्षर शिक्षार्थी पर 100 रुपये की गुरुदक्षिणा दी गई।

पढ़ना–बढ़ना आंदोलन का परिवर्तित ग्रामीण स्वरूप

मध्य प्रदेश में पढ़ना–बढ़ना आंदोलन की ऊर्जा को एक नई दिशा देने तथा ग्रामस्तर तक ऐसा संगठन बनाने के लिए जो सामाजिक प्रेरक के रूप में कार्य करे और ग्राम विकास के लिए नेतृत्व प्रदान करने के उद्देश्य से पढ़ना–बढ़ना समितियों को संघ के रूप में संगठित किए जाने की योजना है। ये संघ ग्राम स्तर तथा जनशिक्षा केंद्र स्तर पर स्थापित किए जाएंगे। ग्राम स्तर पर ग्राम पढ़ना–बढ़ना संघ और जनशिक्षा केंद्र पर नोडल पढ़ना–बढ़ना संघ गठित होंगे। इस संघ के सदस्य पढ़ना–बढ़ना समितियों के सदस्य तथा उन्हें पढ़ाने वाले गुरुजी होंगे। ये संघ संपूर्ण साक्षरता और सतत शिक्षा के लिए कार्य करेंगे। ग्राम विकास के लिए योजना निर्माण, ग्राम के समस्त बच्चों को नियमित रूप से शाला भिजवाना, निरक्षरों को साक्षर करने की व्यवस्था करना, महिला शिक्षा के पक्ष में माहौल तैयार करके स्वसहायता समूह बनाने हेतु लोगों को प्रेरित कर बचत करने की आदत डालना प्रमुख है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि मध्य प्रदेश में साक्षरता वृद्धि के लिए चलाए जा रहे अभियानों, योजनाओं एवं आंदोलनों के पिछले दशक में अपेक्षित परिणाम आए हैं तथा प्रदेश को सामाजिक विकास की नई दिशा एवं गति मिली है। प्रदेश में अपनाई गई शिक्षा मिशन प्रणाली सफल रही है किंतु यात्रा यहीं समाप्त नहीं होती क्योंकि वृक्ष लगाना एक बात है किंतु वृक्ष को बड़ा करने के लिए उसे हरा–भरा रखने के लिए सींचना भी जरूरी है अर्थात शासकीय योजनाओं के क्रियान्वयन का निरंतर मूल्यांकन होना चाहिए साथ ही यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि जिन व्यक्तियों को साक्षर बनाया जा रहा है वे अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग हों। वस्तुतः किसी भी योजना की सफलता जनसहयोग एवं जनभागीदारी पर ही निर्भर करती है। योजना बनाना सरल है किंतु योजना की सही एवं पूरी जानकारी जन–जन तक पहुंचाना कठिन है इसके लिए अशासकीय संगठनों, सामाजिक संगठनों, पंचायत आदि को प्रभावी भूमिका अदा करनी चाहिए। पढ़ना–बढ़ना आंदोलन के अंतर्गत अधिक से अधिक स्वसहायता समूह बनाने पर बल देना चाहिए, साथ ही आत्मनिर्भरता बढ़ाने पर भी बल देना चाहिए। ग्राम और नोडल पढ़ना–बढ़ना संघ के सदस्यों की क्षमता का विकास एवं सुदृढ़ीकरण हो, वे ग्राम के विकास में समुचित भूमिका निभा सकें इस बात पर विशेष जोर दिया जाना चाहिए। साक्षरता वृद्धि एवं शिक्षा के लोक व्यापीकरण हेतु चलाए जा रहे सभी कार्यक्रमों की गणुवत्ता का उन्नयन भी किया जाना चाहिए। ❑

व्याख्याता
सहोद्राराय शासकीय महिला पॉलीटेकनिक
सागर (मप्र)

संदर्भ सूची

1. *मध्य प्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 1999–2000*, आर्थिक एवं सांख्यिकीय संचालनालय, भोपाल
2. *मध्य प्रदेश : बेहतर कल की ओर बढ़े कदम*, जनसंपर्क संचालनालय, वाणगंगा, भोपाल
3. *भोपाल दस्तावेज प्रारूप 2002*, मध्य प्रदेश शासन, वल्लभ भवन, भोपाल।
4. *रोजगार और निर्माण माध्यम*, मध्य प्रदेश, भोपाल
5. *दैनिक नवभारत*, भोपाल, दिनांक 17 अप्रैल, 2002
6. *दैनिक भास्कर*, भोपाल, 1 नवंबर 2001

लोक प्रशासन

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in hard work and scientific approach)

लोक प्रशासन ही क्यों?

क्योंकि आप एक लोक प्रशासक बनने जा रहे हैं।

- परीक्षा की चुनौतियों एवं बदलती परिस्थितियों के अनुरूप विषय
- इसकी महत्ता में उत्तरोत्तर वृद्धि जारी
- भविष्य में सामान्य अध्ययन के अनिवार्य भाग के रूप में लोक प्रशासन को शामिल किए जाने की अधिकतम संभावना
- वर्तमान समय में भी **अंकों के खेल** में सबसे आगे – आपका अध्ययन 600 अंकों के लिए, लेकिन आप हल कर सकेंगे एक हजार से अधिक अंकों के प्रश्न (वैकल्पिक विषय - 600 + निबंध - 200 + G.S. (Polity) - 90 + G.S. (Social Problem) + G.S. Current Affairs + साक्षात्कार
- और अब **परिणाम में भी सबसे आगे** – IAS 2001 के TOP-20 में सर्वाधिक (7) लोक प्रशासन से
- लोक प्रशासन न पढ़ें, तब भी उसका 60-70 प्रतिशत सिलेबस सामान्य अध्ययन के भाग के रूप में हर परीक्षार्थी के लिए पढ़ना अनिवार्य।
- प्रत्येक परीक्षार्थी द्वारा जिज्ञासावश भी अधिकांश सिलेबस का अध्ययन, जैसे - भर्ती, प्रशिक्षण, अलघ कमेटी, वेतन एवं सेवा शर्तें आदि।

क्या है कोई विकल्प इससे बेहतर?

लोक प्रशासन का चयन - उचित निर्णय और व्यावसायिक दृष्टिकोण

तो आइये करें - लोक प्रशासन के अध्ययन की शुरुआत, 'अतुल लोहिया' के साथ।

अतुल लोहिया ही क्यों?

क्योंकि केवल हम कराते हैं लोक प्रशासन का सम्पूर्ण एवं समग्र अध्ययन।

- **अध्यापन की शैली** - विशिष्ट व वैज्ञानिक (दो घंटे से लेकर 200 घंटे तक एक कड़ी के रूप में पढ़ाने का दावा)
- **नोट्स** - वैज्ञानिक तरीके से तैयार पूर्णतः संशोधित व परिमार्जित Pre. और Mains के लिए अलग-अलग। संदर्भ : 80 से 85 स्रोत।
- केवल हमारे नोट्स से UPSC (Pre.) और UPPCS (Pre.) 2001 एवं 2002 में लगभग 90 प्रतिशत प्रश्न आए।
- **Revision Notes** - चार्ट के रूप में उपलब्ध कराने वाले एकमात्र शिक्षक।
- हम देते हैं प्रत्येक क्लास का 40 प्रतिशत समय प्रश्न अभ्यास में और शेष समय **विषय की बेहतर समझ एवं छात्रों की परिपक्व सोच** के विकास में।
- मुख्य परीक्षा के पहले प्रत्येक छात्र के लिए व्यक्तिगत रूप से पूरे सिलेबस का रिवीजन
- इसके अतिरिक्त आप प्राप्त कर सकते हैं – प्रतियोगी वातावरण, कुशल परिचर्चा समूह, और भी...

'अतुल लोहिया'

शिक्षक, मार्गदर्शक और मित्र भी

Admission going on

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध

MAINS - 2,000/-

MAINS + PRE. - 3,000/-

M.P. P.S.C. (Mains) के
लोक प्रशासन (द्वितीय प्रश्न पत्र) की निःशुल्क तैयारी

IAS TUTORIALS

103, Jaina House, Behind Safal Mother Dairy,
Mukherjee Nagar, Delhi-9 Ph. : (O) 7651392 Cell.: 9810651005

गुजरात में प्राथमिक शिक्षा

देवेन्द्रनाथ के. पटेल

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 के अनुसार सभी राज्यों में संविधान के अमल होने के 10 साल तक 14 साल की उम्र वाले सभी बच्चों को शिक्षा मुफ्त में देने का प्रबंध करने को कहा गया है। गुजरात जैसे समृद्ध और प्रगतिशील राज्य में पिछले 50 साल में प्राथमिक शिक्षा में कैसा काम हुआ है इसका मूल्यांकन करना अनिवार्य है।

गुजरात सरकार के आंकड़ों का अध्ययन करने से पता चलता है कि प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में भारत के अन्य राज्यों की तुलना में गुजरात में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति अच्छी ही रही है, लेकिन गुजरात सोशल इंफ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट बोर्ड के द्वारा तैयार किए गए दस्तावेज 'विजन–2010' में स्वीकार किया गया है कि शिक्षा के क्षेत्र में गुजरात की स्थिति अन्य राज्यों की तुलना में संतोषजनक नहीं है। औद्योगिक राज्य में अग्रणी नाम करने वाला गुजरात, शिक्षा के क्षेत्र में उतनी प्रगति नहीं कर पाया है।

साक्षरता दर

सन् 1991 की जनगणना के अनुसार गुजरात में साक्षरों की संख्या 20,284,486 थी

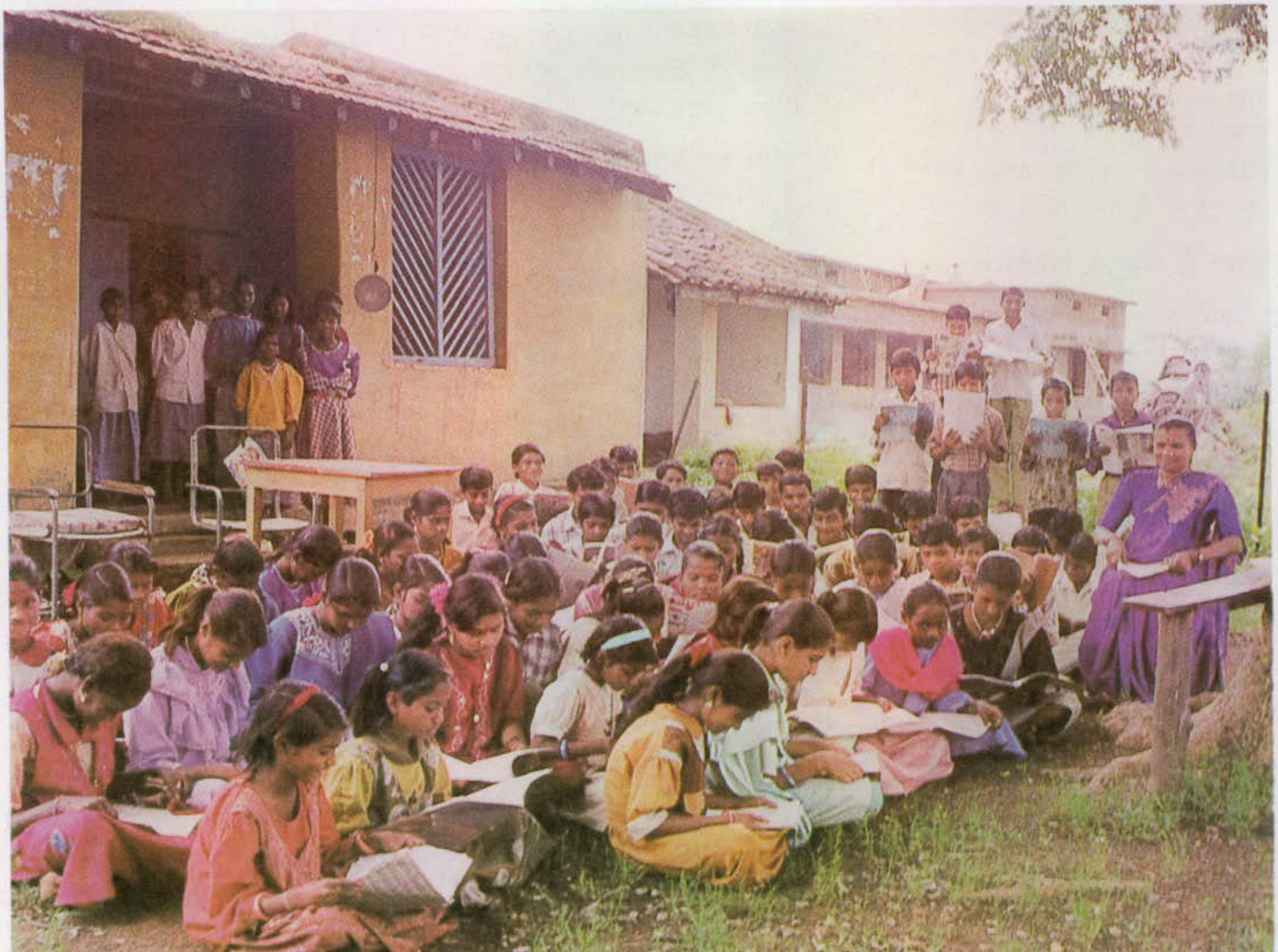

और साक्षरता दर 61.57 प्रतिशत थी। महिलाओं में 46.6 प्रतिशत और पुरुषों में 73.7 प्रतिशत।

2001 में राज्य में साक्षरता दर 69.97 प्रतिशत तक पहुंच गई। इसमें महिलाओं की 59 प्रतिशत तथा पुरुषों की साक्षरता दर 80 प्रतिशत है। पिछले छह साल के दौरान गुजरात में साक्षरता का स्तर सात प्रतिशत से भी कम बढ़ा है। जबकि इसी दौरान महाराष्ट्र में 9 प्रतिशत, उत्तर प्रदेश में 14 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 14 प्रतिशत, मध्य प्रदेश में 12 प्रतिशत, असम और सिक्किम में 22 प्रतिशत वृद्धि हुई है। समग्र देश में शिक्षा के क्षेत्र में 9 प्रतिशत वृद्धि हुई है।

बच्चे का स्कूल प्रवेश

स्कूल प्रवेश के लिए बच्चों की संख्या की दृष्टि से गुजरात में प्रतिशत दर अन्य राज्यों की तुलना में ऊंची है। फिर भी साक्षरता का स्तर वांछनीय स्तर पर नहीं पहुंच पाया है। इसका प्रमुख कारण 'ड्राप आउट' (बीच में शाला छोड़ देने का) प्रतिशत 48 प्रतिशत है, जो देश भर में सबसे अधिक है।

बीच में स्कूल छोड़ना

प्राथमिक शिक्षा की 1 से 7 तक की कक्षा में ड्राप आउट संबंधी आंकड़ों के अध्ययन से पता चलता है कि सन् 1990–91 में लड़कों में रीटेंशन प्रतिशत 37.14 प्रतिशत था जबकि लड़कियों में रीटेंशन दर 33.40 प्रतिशत, थी। जबकि ड्राप आउट प्रतिशत लड़कों में 62.86 प्रतिशत, लड़कियों में 66.10 प्रतिशत, कुल मिलाकर 64.48 प्रतिशत था। सन् 1999–2000 में रीटेंशन प्रतिशत और ड्राप आउट में सुधार हुआ है। लड़कों और लड़कियों में रीटेंशन प्रतिशत क्रमशः 57.24 प्रतिशत और 60.13 प्रतिशत है, जबकि रीटेंशन दर 58.52 प्रतिशत है।

प्राथमिक शिक्षा में कक्षा 1 से 5 और कक्षा 6 से 7 तक छात्रों की संख्या के मामले में गुजरात अन्य राज्यों की तुलना में नीचे है। गुजरात में यह 65.78 प्रतिशत है। गुजरात की तुलना में केरल 98 प्रतिशत, कर्नाटक में 67 प्रतिशत है। गुजरात में प्रतिवर्ग में छात्रों की संख्या ज्यादा है। शिक्षक और छात्रों का प्रमाण 1:59 है, जबकि समग्र भारत में 1:48 और केरल में 1:37 है।

गुजरात में स्कूल बीच में छोड़ने के कारण

गुजरात में बीच में पढ़ाई छोड़ने वालों का अनुपात ज्यादा होने का प्रमुख कारण यह है कि गुजरात के गांवों में प्राथमिक शिक्षा की सुविधा तो अच्छी है लेकिन सभी विषयों में नहीं। उच्च विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा में कई खामियां हैं। भावनगर विश्वविद्यालय के द्वारा किया गया एक अध्ययन इस बात की पुष्टि करता है। इस अध्ययन का निष्कर्ष इस तरह है :

1. तीसरी कक्षा में 51 प्रतिशत बच्चे गुजराती में और 55 प्रतिशत गणित और पर्यावरण विज्ञान में सफल हुए।
2. पांचवीं कक्षा में 34 प्रतिशत बच्चे गुजराती में और 31 प्रतिशत गणित में और 46 प्रतिशत पर्यावरण विज्ञान में सफल हुए।

प्राथमिक शिक्षा विजन–2010 में प्राथमिक शिक्षा की निराशाजनक स्थिति में यह भी बताया गया है कि स्वतंत्रता के बाद राज्य का प्रमुख ध्येय 'अंतरराष्ट्रीय समकक्ष स्तर' की शिक्षा पर ही ध्यान केंद्रित करना है, फलस्वरूप प्राथमिक शिक्षा की आवश्यक जरूरतों को उचित महत्व दिया ही नहीं गया।

कुछ अच्छी बातें

गुजरात में 96 प्रतिशत गांवों में एक किलोमीटर के अंतर पर शाला की सुविधा उपलब्ध है। केरल में यह 82 प्रतिशत और कर्नाटक में 84 प्रतिशत है। प्रतिकिलोमीटर जनसंख्या की स्थिति ध्यान में रखी जाय तो गुजरात में 98.78 प्रतिशत आबादी को यह सुविधा मिली है, जबकि केरल में 90 प्रतिशत और कर्नाटक में 97 प्रतिशत है। शिक्षा के पीछे गुजरात में प्रति छात्र 1,362 रुपये खर्च किए जाते हैं।

सारांश

- औद्योगिक राज्यों में अग्रणी नाम प्राप्त करने वाला गुजरात शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त विकास नहीं कर पाया है।
- विजन–2010 सोशल सेक्टर के दस्तावेज के अनुसार पिछले छह वर्ष में गुजरात में शिक्षा का प्रसार 7 प्रतिशत से भी कम बढ़ा है, जो संतोषजनक नहीं का जा सकता है।
- शाला प्रवेश में बच्चों का प्रतिशत गुजरात में ज्यादा होने के बावजूद शिक्षा का प्रसार वांछित स्तर पर नहीं पहुंच पाया है। इसका कारण गुजरात में 'ड्राप आउट' का प्रतिशत ज्यादा होना है।
- सन् 1999–2000 में कक्षा 1 से 7 तक के लड़कों में 57.24 प्रतिशत और लड़कियों में 60.13 प्रतिशत रीटेंशन प्रतिशत दृष्टव्य है।
- पिछले दो साल में राज्य सरकार ने शिक्षकों की संख्या में बढ़ोतरी, शिक्षा के स्तर में सुधार और शालाओं को विकल्प प्रदान करने का काम किया है।

पिछले दो साल में शिक्षकों की संख्या में बढ़ोतरी की गई है लेकिन शिक्षकों को बहुत कम वेतन दिया जा रहा है। यह अन्यायकारी है। शिक्षक को समुचित वेतन न देकर प्राथमिक शिक्षा का उद्धार/उत्थान कैसे होगा? यह एक यक्षप्रश्न है।

गुजरात राज्य में क्षिक्षा की वर्तमान स्थिति चिंताजनक है। सरकार को इस दिशा में और कठोर कदम उठाने होंगे। प्राथमिक शिक्षा के लिए समाज का सहकार ग्रामीण क्षेत्रों और शहरी झोपड़ट्टियों में अनिवार्य है। समग्र राज्य स्तर पर शालाओं में ज्यादा से ज्यादा शाला के कमरों और मकान निर्माण के लिए व्यक्तिगत दाता, स्वैच्छिक संस्था, ट्रस्ट और औद्योगिक घराने भी जवाबदारी निभाएं या सहयोग प्रदान करें तभी राज्य में प्राथमिक शिक्षा का स्तर सुधर पाएगा। ❑

परियोजना अधिकारी/प्राध्यापक
निरंतर शिक्षा एवं विस्तार कार्य विभाग
दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत–395 007

शिक्षा से दूर रोटी, कपड़ा और जीवन का असबाब चुन रहा बचपन

अनिल चमड़िया

बिहार की अधिकतर पिछड़ी, दलित, आदिवासी और दूसरी जातियों के बच्चों की शिक्षा में सामाजिक बाधाएं खड़ी होती रही हैं। सरकार द्वारा पिछले पचास वर्षों के दौरान उनके लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम को लागू किए जाने के बावजूद इन वर्गों के दो प्रतिशत से भी ज्यादा बच्चे सरकारी विद्यालयों तक नहीं पहुंच सके हैं।

दक्षिण राजस्थान के कुछ जिले बेहद पिछड़े माने जाते हैं। यहां रहने वाली आदिवासी एवं दलित जातियां बेहद पिछड़ी हैं। इन जातियों की स्त्रियों की साक्षरता दर अत्यंत कम है तथा यहां के बच्चे–बच्चियां भयानक रूप से कुपोषण के शिकार हैं जिनके स्वास्थ्य और शिक्षा की स्थिति अत्यंत दयनीय है। विद्यालय और स्वास्थ्य केंद्र यदि हैं तो नाम के और आवंटनों की बंदरबाट के लिए। ऐसी शिकायतें लोगों से भी मिलीं और घूमकर देखने से भी इनके प्रमाण मिले। मसलन विद्यालयों में आदिवासी और दूसरे ग्रामीण बच्चों के बैठने की एक तो जगह नहीं है। यदि कुछेक गांवों में कमरे बने भी हैं तो वहां शिक्षक नहीं जाते। शिक्षक जाते हैं तो उन्हें चाय–पानी कराना पड़ता है। कई जगहों पर तो शिक्षकों की उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए आंदोलन तक करना पड़ा है। दूसरी शिकायत यह थी कि गांव में जैसे ही किसी भी किस्म का अभाव अपनी जगह बनाता है, उन बच्चों को विद्यालयों से दूर कहीं न कहीं कामकाज के लिए निकलना पड़ता है। अभी राजस्थान में सूखे की भयानक स्थिति में तो यह बात आम–सी हो गई है। कई मजदूरों को अपने परिवार के साथ दूसरे राज्यों के लिए पलायन करना पड़ा है।

बिहार की स्थिति का बयान करने से पहले राजस्थान के ये उदाहरण इसीलिए प्रस्तुत किए गए ताकि प्रारंभिक शिक्षा के हालात से जुड़ी प्रवृत्तियों को लगभग सभी पिछड़े और ग्रामीण इलाके में एक जैसी समझकर उस पर गंभीरतापूर्वक विचार विमर्श किया जा सके और उनके समाधान की दिशा में आगे बढ़ा जा सके। बिहार में प्रारंभिक शिक्षा के प्रवाह में किस तरह की रुकावटें हैं उसे समझने के लिए पहले इस उदाहरण को देखा जा सकता है। अभी हाल ही में बिहार की एक दलित जाति मुसहर में शिक्षा के प्रचार–प्रसार की स्थिति पर एक पुस्तक आई है। इसमें द्वारको सुंदरानी ने कहा है कि बिहार में मुसहर जाति के बच्चों को लिखने पढ़ाने के सरकारी और गैरसरकारी स्तर पर अब तक किए गए सारे प्रयास आमतौर पर अपर्याप्त साबित हुए हैं। यहां तक कि बुनियादी शिक्षा कार्यक्रम के तहत तीस लाख आबादी वाले इस समुदाय का संस्कृतीकरण करने की दिशा में किए गए प्रयासों के भी अच्छे परिणाम नहीं निकले हैं।

द्वारको सुंदरानी का क्या महत्व है, इस बात का अंदाजा इससे लगाया जा सकता है कि वे मुसहर जाति के बच्चों को शिक्षित करने के लिए 1953 से ही प्रयासरत हैं। लेकिन उनके प्रयासों में किस तरह की सामाजिक अड़चनें आईं उन्हें जानना सबसे पहले जरूरी है। उन्होंने कई तरह के प्रयासों के बाद जब गांधीजी की बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर एक आवासीय विद्यालय की स्थापना की और मुसहर जाति के बच्चों को बुलाने के लिए एक गांव में गए तो उन पर गांव के भूस्वामियों ने हमला कर दिया। भूस्वामियों को कहना था कि उन्होंने एक बच्चे की मां की मृत्यु होने पर पैसे खर्च किए थे। कफन खरीदा था। लिहाजा उसे हमारे खेतों में काम करना पड़ेगा। आखिरकार सुंदरानी को खाली हाथ लौटकर वापस आ जाना पड़ा। लेकिन कई दिनों के बाद वह बच्चा एक दिन उनके विद्यालय में जा पहुंचा। तब उन्हें सुखद आश्चर्य हुआ। सुंदरानी का कहना है कि आज वह बच्चा एक किसान है और उसकी तीनों बच्चियां उनके विद्यालय में पढ़ रही हैं।

सुंदरानी के इस उदाहरण से एक बात तो यह साफ होती है कि बिहार की अधिकतर पिछड़ी, दलित, आदिवासी और दूसरी जातियों के बच्चों की शिक्षा में सामाजिक बाधाएं खड़ी होती रही हैं। हो सकता है कि इस तरह की स्थिति अब पुराने रूप में मौजूद नहीं हो। लेकिन उसके बावजूद शिक्षा की स्थिति में कोई गुणात्मक परिवर्तन दिखाई नहीं पड़ रहा है। सरकार द्वारा पिछले पचास वर्षों के दौरान उनके लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम को लागू किए जाने के बावजूद उस जाति के दो प्रतिशत से भी ज्यादा बच्चे सरकारी विद्यालयों तक नहीं पहुंच सके हैं। द्वारको सुंदरानी का मानना है कि मुसहर जैसी पिछड़ी जाति के बच्चों को शिक्षित करने के लिए एक तो आवासीय विद्यालय अनिवार्य हैं लेकिन इसके लिए भी उन्होंने सबसे बड़ी जिस समस्या का उल्लेख किया, वह अच्छे शिक्षकों का अभाव है।

शिक्षकों और शिक्षा पद्धति का सवाल यहां क्यों महत्वपूर्ण है उसे इस तरह के उदाहरणों

बिहार में साक्षरता की स्थिति : कुछ तथ्य

- वर्ष 1991–2001 के दशक में पूरे देश में निरक्षर लोगों की जनसंख्या में उल्लेखनीय कमी आई है। लेकिन बिहार में निरक्षर लोगों की संख्या में सर्वाधिक 29,82,134 लोगों का इज़ाफा हुआ है। अर्थात साक्षरों की संख्या में सर्वाधिक 9.33 प्रतिशत की कमी आई है।
- यहां वर्ष 1991 की तुलना में 2001 में 3.13 प्रतिशत निरक्षर पुरुष और 21.99 प्रतिशत निरक्षर महिलाओं की वृद्धि हुई है। स्त्रियों और पुरुषों दोनों ही मामलों में निरक्षरों की संख्या में हुई यह वृद्धि देश के किसी भी राज्य की तुलना में सर्वाधिक है।
- यदि देश की साक्षर जनसंख्या के प्रतिशत के हिसाब से राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों की सूची (ऊपर से नीचे की ओर) बनाएं तो बिहार 35वें स्थान पर आता है जो देश के सभी राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों में सबसे नीचे है।
- सन् 2001 के जनगणना के आंकड़ों के अनुसार भारत की औसत राष्ट्रीय साक्षरता दर 65.38 प्रतिशत है। इनमें से औसतन 75.85 प्रतिशत पुरुष और 54.16 प्रतिशत स्त्रियां साक्षर हैं जबकि बिहार के मामले में मात्र 47.53 प्रतिशत जनसंख्या ही साक्षर है। यह राष्ट्रीय औसत से 28.32 प्रतिशत कम है। इसमें 60.32 प्रतिशत पुरुष और मात्र 33.57 प्रतिशत स्त्रियां ही साक्षर हैं।

स्रोत : जनसंख्या के अनंतिम आंकड़े, 2001 का पेपर–1

प्रस्तुति : अंजली आर.

से समझा जा सकता है। मुसहर जाति के ही जो बच्चे विद्यालय की चौखट पर पहुंचे हैं, उनके बीच किए गए एक अध्ययन से इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। ज्ञानदेव मणि त्रिपाठी ने गया जिले के एक विद्यालय के बच्चों के बीच किए गए अध्ययन का हवाला देकर बताया कि उन बच्चों ने आनंददायी शिक्षा निकेतन में प्रारंभिक शिक्षा हासिल की है। जब उन बच्चों से पूछा गया कि उनके टोले में किसने सूअर पाला है तब सबकी निगाहें एक बच्चे की तरफ गईं। इस बात को लेकर उस बच्चे और दूसरे बच्चों के बीच झगड़ा तक हो गया। झगड़े के निपटारे के बाद उन्हें समझाया गया कि सूअर पालन करना कोई बुरी बात नहीं है। आखिर वे सूअर पालन से इतना क्यों चिढ़े हुए हैं। तब उनमें से कई बच्चों ने यह बताया कि सूअर गंदे होते हैं, नाली में रहते हैं और दूध भी नहीं देते जबकि गाय रोजाना दूध देती है। उसके गोबर का भी इस्तेमाल कई तरीके से किया जाता है। दूध और गोईठा की बिक्री से पैसा कमाया जाता है लेकिन सूअर तो बस एक बार बेचा जाता है। इस तरह समझा जा सकता है कि व्यावहारिक स्तर पर बुनियादी शिक्षा की पूरी अवधारणा ही बच्चों को अपने समाज से काट देती है। उन्हें उनके पारिवारिक पेशे के प्रति ही घृणा होने तक की स्थिति पैदा कर देती है।

पटना जिले के एक प्राथमिक विद्यालय में पहली कक्षा से लेकर पांचवी कक्षा तक के बच्चों को एक ही कमरे में एक महिला शिक्षक पढ़ा रही थी। इस तरह से बिहार के प्राथमिक विद्यालयों में बहुकक्षीय और बहुवर्गीय शिक्षा आम बात है। इससे भी यह कल्पना की जा सकती है कि पटना के उस विद्यालय में बीसियों बच्चे और बच्चियां कैसी शिक्षा हासिल कर पा रहे होंगे।

ये सारे सवाल शिक्षा से वंचित बिहार की किसी एक विशेष जाति के साथ नहीं जुड़े हुए हैं बल्कि सभी जाति और समुदायों से जुड़े हैं। अब सवाल है कि बिहार में ऐसी जातियों और समुदायों की पहचान किस तरह से की जाए। बिहार शिक्षा परियोजना के प्रमुख रह चुके भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी व्यास जी मिश्र ने अपनी चर्चित पुस्तक *गहरे पानी पैठ* में इसकी पहचान कराई है। वर्गीय विश्लेषण पद्धति के आधार पर हाशिये पर खड़े समूहों से आने वाले बच्चे इस रूप में दिखाई पड़ते हैं :

- अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चे।
- अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के व्यापक समूह में से उन समूहों के बच्चे जो अभी तक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जाति समाज की मुख्यधारा में भी शामिल नहीं हो सके हैं।
- घुमंतू जातियों और जनजातियों के बच्चे।
- कामकाजी बच्चे एवं बाल मजूदर।
- अप्रवासी मजदूरों के बच्चे।
- स्कूली शिक्षा बीच में छोड़ देने वाले बच्चे।
- स्कूली शिक्षा से वंचित बच्चे एवं खेतिहर मजदूरों, असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले गरीब मजदूरों के बच्चे।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जातियों में कुछ समूह ऐसे हैं जिनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति दयनीय है। वे समूह हैं – डोम, मुसहर, बिरहोर, असुर, शबर पहाड़िया, मेहतर आदि। घुमंतू या खानाबदोश जातियों में नट, संपेरा तथा बंजारा जैसे समूहों की शैक्षिक, सामाजिक स्थिति भी अत्यंत दयनीय है। मुसलमानों में मिरासी, नालबंद, नट, शेरशाही मुसलमान, कुंजड़ा, अंसारी जैसे पसमांदा कहे जाने वाले समूह। उपर्युक्त समूह या तो हाशिये पर धकेल दिए गए हैं अथवा व्यवस्थागत कारकों के कारण अवसरों को चुन पाने में सक्षम नहीं हो सके हैं। खासकर बाल श्रमिकों के संदर्भ में अवसरों को चुन पाने में अक्षमता को आसानी से समझा जा सकता है।

इसके अलावा क्षेत्रीय विकास के मानकों के आधार पर अगर विश्लेषण किया जाए तो हाशिये पर खड़े बच्चों की पहचान इस प्रकार की जा सकती है – छोटी–छोटी दूरस्थ बसी आबादियों में रहने वाले बच्चे, दियारा क्षेत्रों में रहने वाले बच्चे, जंगलों में छिटपुट बसी आबादियों में रहने वाले बच्चे और अविकसित पहाड़ी क्षेत्रों में बसे छोटे–छोटे गांवों के बच्चे।

व्यास मिश्र अपने अनुभवों के आधार पर कहते हैं कि बच्चों की शिक्षा का मतलब उन्हें केवल अक्षर ज्ञान देना या साक्षर बना देना भर नहीं है। पढ़ाई की उम्र पार कर चुके अनपढ़ लोगों के लिए साक्षरता महत्वपूर्ण कार्यभार है किंतु बच्चों को केवल साक्षर भर बना देना उन्हें शैक्षिक दृष्टि से अपरिपक्व बनाए रखना है। शिक्षा का अर्थ हमेशा व्यापक संदर्भ में लिया जाना चाहिए। शिक्षा परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए सक्षम बनाती है। वह अपने और अपने परिवेश के अंतरसंबंधों की समझ सिखाती है। वह हमारे व्यवहार को प्रभावित करती है। शिक्षा मनुष्य को व्यापक सामाजिक सरोकारों से भी जोड़ती है। शैक्षिक ज्ञान से सशक्तीकरण होता है। परंतु यह सशक्तीकरण वर्तमान व्यवस्था में प्रभुतासंपन्न वर्गों के लिए सत्ता पर वर्चस्व बनाए रखने का

औजार हो गया है। इस तरह के अनुभवों को ही आधार बनाकर बिहार शिक्षा परियोजना के पूर्व अधिकारी व्यास जी मिश्र कुछ महत्वपूर्ण सुझाव भी प्रस्तुत करते हैं। उनका मानना है कि पाठ्यचर्चा में सबसे महत्वपूर्ण होगा, बच्चों को केंद्र में रखकर इनके मनोविज्ञान को समझना। पाठ्यचर्चा में यह तय करना होगा कि किताबें कैसी हों और कि क्या बच्चे केवल किताबों से ही सीखेंगे या जो कुछ भी उन्होंने विद्यालय आने से पहले सुना–गुना है, उसके आधार पर पढ़ाई जाने वाली चीजें तय होंगी? दूसरे शब्दों में कहीं से बनी–बनाई पाठ्य सामग्री लाकर नहीं, बच्चों के परिचित संदर्भों में पाठ्यसामग्री की रचना करनी होगी। इसके बाद उन्होंने उन शिक्षकों की जरूरत पर बल दिया है जो बच्चों के प्रति गहरे रूप से आत्मिक और संवेदनशील हों। इसके लिए वैसे शिक्षकों को गढ़ना होगा जो बच्चों के प्रति तथा हाशिये पर खड़े समुदाय के प्रति न केवल जवाबदेह हों बल्कि कहीं न कहीं से उनके अंदर भी अमानुषिक यथार्थ को बदलने की लालसा दिपदिपाती हो। सीखने–सिखाने के तरीके ऐसे तैयार करने पर बल दिया है जहां कि आनंददायी शिक्षण में शिक्षा कहीं दीखे ही नहीं और सर्वत्र कथित आनंद ही दीखे। आनंद माध्यम है और उसका अंतिम पड़ाव है पक्की शिक्षा। इसी तरह समुदाय को विद्यालय के प्रबंधन एवं संचालन से जोड़ना होगा। समुदाय और शिक्षक मिल बैठकर बच्चों की शिक्षा एवं उनमें विकास की संभावनाएं उभारने की युक्तियां सोचें।

इन्हीं अनुभवों और सुझावों के आधार पर यह सवाल उठाया गया है कि सरकारों द्वारा चलाए जा रहे अभियान या स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा प्राथमिक शिक्षा के लिए अभियानों की सबसे ज्यादा जरूरत देश के किस तबके को है? किन विद्यालयों, शिक्षकों और शैक्षिकों एवं शैक्षिक प्रबंधकों के लिए है? खेत खलिहानों, दस्तकारों, शिल्पकारों, छोटे–मझोले किसानों, ढाबों, गैराजों, खदानों, पत्थर तोड़ने वाले, बीड़ी बनाने वाले समुदायों का यह हिस्सा ऐसा है जो प्रायः खुद चलकर स्कूल नहीं जाता है। रोजी रोटी की जगह शिक्षा को अपनी बुनियादी जरूरतों का हिस्सा नहीं समझने वाले इसी तबके को अभियानों की सबसे ज्यादा जरूरत है। इसी तरह सरकारी स्कूलों में समुदाय और सरकार के बीच अलगाव दीखता है। बच्चों को गढ़ने के काम में लगाए गए इन शिल्पकारों को शिक्षण की नई–नई विधियों का प्रशिक्षण देने की माकूल व्यवस्था नहीं। अब तक यही देखा गया है कि सरकारी स्कूलों की दशा–दिशा सुधारने के आधे–अधूरे प्रयास के असफल होते ही सरकारें वैकल्पिक शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा और पैरा टीचर जैसी अवधारणाओं पर काम करने लग जाती हैं। वे किसी तरह से बच्चों को ढाई आखर पढ़ा देने की व्यवस्था को ही प्राथमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण की कुंजी मान लेने की भूल करने लगती हैं।

दरअसल शिक्षा के विभिन्न हिस्सों में प्राथमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण के लिए जो गंभीर अभियान चल रहे हैं, उनके पीछे ध्येय चाहे जितना अच्छा हो लेकिन उसके प्रस्थान बिंदु को लेकर गंभीर सवाल खड़े हैं। इन अभियानों को चलाने में अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं खुलकर मदद कर रही हैं। विश्व बैंक तक से काफी पैसे उधार लेकर इन अभियानों में लगाया जा रहा है। शायद यह मान लिया गया है कि बुनियादी शिक्षा के लिए सिर्फ संसाधन की जरूरत है और ये जहां से भी मिलें उसे लेने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन बिहार शिक्षा परियोजना के पूर्व प्रमुख ने इस संदर्भ में अपने कार्यकाल के जिन अनुभवों का उल्लेख अपनी किताब में किया है, उन पर गौर करने की सख्त जरूरत है। शिक्षा अभियान के लिए विश्व बैंक से कर्ज लेने के सिलसिले में समझौता वार्ता के दौरान की कुछ बानगी यहां पेश है। जैसे विश्व बैंक ने कर्ज देने के दौरान यह कहा कि बिहार में अनुसूचित जनजातियों और बालिकाओं की प्राथमिक शिक्षा की वही रणनीति होगी जो विश्व बैंक को मान्य हो। कई दूसरे मुद्दों पर भी इसी तरह विश्व बैंक को कर्ज देने में परेशानी हो रही थी। तब उन्हें समझाया गया कि स्कूलों में कौन सी पाठ्यपुस्तकें पढ़ाई जाएं, क्या पाठ्यपुस्तकें हों, इसे राज्य सरकार ही तय करती है। साथ ही उन तयशुदा किताबों को प्रकाशित करने का कापीराइट राज्य पाठ्यपुस्तक निगम का होता है। लेकिन कर्ज देने वाले विश्व बैंक को ये बातें कतई रास नहीं आ रही थीं।

कहने का तात्पर्य यह है कि दूरदराज के इलाकों में शिक्षा से वंचित तबकों और समुदायों को शिक्षा से लैश करने का सवाल संसाधन की व्यवस्था से लेकर तमाम तरह की देश की आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थितियों से जुड़ी गंभीर और लंबी प्रक्रियाओं से जुड़ा हुआ है। इनमें फिलहाल कई स्तरों पर गंभीर खामियां दिखाई पड़ रही हैं। वरना और कोई कारण नहीं है कि इतने सारे गंभीर अभियानों के बावजूद देश में शिक्षा का प्रचार–प्रसार का काम पूरा नहीं होता। इसीलिए बिहार शिक्षा परियोजना के निदेशक एस.के. नेगी को अपनी पत्रिका *आह्वान* में यह लिखना पड़ता है कि शहर में निकलता हूं या कस्बे में, सड़क किनारे बजबजाते कचरे में जहां सुअर मुंह मार रहे होते हैं, देश के सबसे कमासुत लोगों की बेटियां वहीं उसी बदबूदार विषैले कचरे में प्लास्टिक थैलियां, कांटी, लोहे के टुकड़े, शीशियां... चुन रही होती हैं। सूरज के उगते न उगते जिस तरह से सुअरों की जमातें इन कटरों पर टूटती हैं, उठने के साथ कांधे पर बोरा लटकाए कमासुत लोगों की ये बेटियां हांफिया चबाती आंखें मलतीं कटरों की ओर झपटती हैं। जिस समय अघाए लोगों की बेटियां स्कूल जाने के लिए तैयार हो रही होती हैं, कमासुत लोगों की बेटियां अपने घर का चूल्हा आबाद रखने की खातिर बदबूदार कचरे में अपना बचपन मिलाती कबाड़ियों के लिए माल निकाल रही होती हैं। और जिस समय तमाम संतों के नाम खुली शिक्षा दुकानों से अघाये लोगों की बेटियां घर लौट रही होती हैं, कमासुत लोगों की बेटियां कबाड़ियों के तराजू पर अपनी कमाई तुला रही होती हैं। यह सिलसिला लंबे समय से चलता आ रहा है। संविधान में सबकी अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा के संकल्पों के बावजूद, यह सिलसिला आज भी जारी है। कारों में, बसों में, रिक्शों पर स्कूल जा रहा बचपन और कचरों में रोटी, कपड़ा और जीवन का असबाब चुन रहा बचपन! ❑

सी–251, सेक्टर–19, रोहिणी, दिल्ली

वर्तमान भारत में प्रौढ़ शिक्षा

आशारानी व्होरा

जिस प्रकार प्रौढ़ों को अक्षर ज्ञान देना या साक्षरता का प्रसार ही प्रौढ़ शिक्षा नहीं है उसी प्रकार साक्षरता के साथ सामाजिक ज्ञान की कुछ बातें जोड़ देना भी सही मायने में समाज शिक्षा नहीं है। समाज शिक्षा से तात्पर्य होना चाहिए, व्यापक रूप में सामाजिक चेतना का जागरण, जिसके बिना कोई भी राष्ट्र आंतरिक–बाह्य संतुलित विकास की राह पर नहीं चल सकता। सामाजिक चेतना के बिना व्यक्तिगत और राजनीतिक स्वतंत्रता बेमानी है। अतः सामाजिक चेतना के लिए स्तरीय समाज शिक्षा अनिवार्य है। वर्तमान सामाजिक विखंडन और अपसंस्कृति की काट के लिए इस पर गंभीर चिंतन–मनन की भी आवश्यकता है। यदि हम चाहते हैं कि हमारा समाज अपनी खोई परिवार–भावना, आत्मीयता, सामाजिक सुरक्षा तथा मिल–बांट का सुख–संतोष वापस पा सके तो हमें अपनी जड़ों से ताकत लेनी होगी।

एक समृद्ध परंपरा

समय को पीछे नहीं लौटाया जा सकता पर प्रगति की दिशा रैखिक भी नहीं होती, वह प्रायः चक्रिक ही होती है यानी समय का चक्र हमेशा पीछे घूमता हुआ आगे बढ़ता है। इस प्रक्रिया में पीछे घूमते हुए आगे बढ़ने का मतलब होता है, विगत अनुभवों की संपदा में से अनुपयोगी पीछे छोड़ते हुए और उपयोगी साथ लेते हुए आगे बढ़ना। फिर वह उपयोगी या बहुमूल्य यहां–वहां, देश–विदेश, अतीत–वर्तमान, कहीं से भी मिले। अनुभवों की गठरी खोलते–बांधते चलने का उद्देश्य पथ–पाथेय की समृद्धि द्वारा जीवन का परिष्कार ही होता है। इस परिष्कार और सुदृढ़ आधार के लिए ही तो व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र, सभी स्तरों पर समाज शिक्षा चाहिए। केवल प्रौढ़ों के लिए नहीं, बाल, किशोर, युवा, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, सभी के लिए। निरक्षर, साक्षर, से लेकर कथित सुशिक्षित तक के लिए।

इसके लिए जड़ों से ताकत लेने का यही अर्थ है कि हमारे यहां अति प्राचीन काल से यह समृद्ध परंपरा न केवल विद्यमान रही है, 'श्रुति', 'स्मृति' की दो अमूल्य 'प्रविधियों' द्वारा, संचार–साधनों, साक्षरता और मुद्रण के अभाव में भी, सारे देश में, उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक विस्तारित भी होती रही है। फिर आज तो हम बहुत उन्नत साधनों, शिक्षण–प्रशिक्षण के अवसरों और अति विकसित प्रविधियों से लाभान्वित हो रहे हैं, तो हम आत्मकेंद्रित, अकेले और असुरक्षित क्यों हो गए हैं? सामूहिकता और सहभागिता का लाभ क्यों नहीं ले पाते? ठीक है कि आज जीवनस्तर उन्नत करने, रखने के लिए भारी प्रतियोगिता और प्रतिस्पर्धा है। हो भी तो जीवन में इतना आगे बढ़ आने के क्या मायने हैं?

आज की स्थिति में समाज शिक्षा का यही अर्थ है, जिसकी कमी हम, आप, सभी अनुभव कर रहे हैं। पर अपनी सतह, अपनी जमीन और धुरी से ताकत लेने को केवल इसलिए आगे ही आगे बढ़ने की तीव्र गति में हांफते हुए भी जरा ठहर कर अपनी आधारभूमि को निहारने या अपनी जड़ों से शक्ति पाते हुए आगे बढ़ने की बात स्वीकार नहीं कर पाते।

हम अपनी वर्तमान स्थितियों से या तो निराश–हताश हैं और स्वयं तटस्थ उत्तरदायित्वहीनता में जीते हुए भी अगल–बगल आक्रोशभरी उंगली उठाते रहते हैं ... 'क्या जमाना आ गया है' ... 'समाज रसातल को जा रहा है' ... 'नई पीढ़ी के ये छोकरे! बाप रे बाप!' ... या सरकार यह नहीं करती, वह नहीं करती आदि। या फिर किसी अवतार द्वारा स्थिति में सुधार की आशा लगाए रहते हैं। समाजोद्धार हमारा साझा दायित्व है, यह बात हम सोच ही नहीं पाते।

इक्का–दुक्का संगठनात्मक प्रयत्न तब तक अपर्याप्त सिद्ध होंगे, जब तक कि हर व्यक्ति

अपने स्तर पर जागरुक होकर उठ खड़ा नहीं हो जाता। सारा समाज किसी असामान्य स्थिति में भी एक साथ नहीं उठ खड़ा होता। यह एक कल्पनातीत स्थिति है। पर समाज शिक्षा की एक सही व्यापक नीति यह काम बहुसंख्यक वर्ग के लिए जरूर कर सकती है, यदि नीति के साथ दिशा–निर्देश भी हों। यह दिशा–निर्देश हमें हमारी समृद्ध परंपरा से मिल सकते हैं और सही नीतियां बनाने के लिए जनता सरकार को बाध्य कर सकती है। इसके लिए पहले जनशिक्षण चाहिए। जनतंत्र की सफलता भी क्या इसी व्यापक जनशिक्षा या समाजशिक्षा पर निर्भर नहीं?

पहले एक दृष्टि जड़ों की ओर ही कि प्रेरणास्रोत इस परंपरा में ही छिपा है, जिसे नए ज्ञान–विज्ञान के आलोक में फिर से देखा–परखा जा सकता है।

भारत में कोई भी युग ऐसा नहीं रहा, जब जनसमूह को उन्नत जीवन की शिक्षा देने के साधन न अपनाए गए हों। लिपि के आविष्कार से पूर्व भी हमारे यहां कुछ ऐसी पद्धतियां प्रचलित थीं, जिनके द्वारा जनजागरण व चेतना–परिष्कार का कार्य किया जाता था। प्राचीनतम साहित्य को (शास्त्रीय व लोक साहित्य, दोनों को) हमारे ऋषियों ने किस प्रकार श्रुति, स्मृति की दो श्रेणियों में विभाजित किया, किस प्रकार हमारे संतों और तीर्थयात्रियों ने गृहस्थोपयोगी सामान्य ज्ञान से लेकर नैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आध्यात्मिक शिक्षण का प्रबंध व प्रसार किया, इसे हम भारतवासी अच्छी तरह जानते हैं।

प्राचीन आश्रम प्रणाली का अध्ययन करने पर ज्ञात होगा कि उस युग में सामाजिक शिक्षा अपने प्रारंभिक रूप में नहीं, अति विकसित रूप में विद्यमान थी। पचास की उम्र के बाद हर गृहस्थ के लिए गृहस्थी छोड़कर वानप्रस्थी हो जाने का विधान था, जिसका अर्थ है, समाज–कल्याण के लिए जीवन अर्पण। जीवन का प्रथम चरण गुरुकुल शिक्षा में ब्रह्मचारी रह कर केवल विद्याध्ययन और सेवा कार्य में बीतता था, यानी 25 वर्ष तक केवल व्यक्तित्व निर्माण, फिर अगले 25 वर्ष तक विवाह और परिवार का दायित्व वहन और फिर समाजशिक्षा व समाजकल्याण के लिए जीवन अर्पण। इसके बाद सब माया–मोह छोड़कर संन्यास और मोक्ष की राह पकड़ना। कहां थी, संतान के भरण–पोषण के बाद बुढ़ापे में सेवा–संभाल के लिए संतान से अपेक्षा?

यदि केवल गुरुकुलों में शिक्षित–प्रशिक्षित ही यह सब कर पाए हों तो भी आम गृहस्थी ज्ञान नैतिक शिक्षा से वंचित न था। गांव–गांव, डगर–डगर घूमने वाले परिव्राजक, संत–महात्मा, कीर्तनिये और लोकगायक, नाटक–मंडलियां, भजनीक और उपदेशक समाजशिक्षा–कार्य कर रहे थे। तीर्थयात्राओं ने तो सारे देश को एक सूत्र में ही बांध दिया था। गंगोत्री का पानी ले जाकर रामेश्वर में चढ़ाने और अर्ध–कुंभ, पूर्ण कुंभ मेलों में, बिना किसी सूचना के, जुटने की परंपरा आज भी देखी जा सकती है, जहां अनपढ़ जनता न केवल बिना एक–दूसरे की भाषा समझे परस्पर आदान प्रदान करती है, जात–पांत की मध्यकालीन विकृतियों से भी मुक्त हो जाती है – 'तीर्थ न पूछे जात।'

फिर तीर्थयात्राएं केवल पर्यटन के लिए नहीं, संत–समागम के लिए ही मुख्यतः होती थीं, जहां से हर गृहस्थ पारिवारिक जीवन और नैतिक–आध्यात्मिक जीवन की शिक्षा लेकर लौटता था और बिना किसी बाहरी दवाब के, केवल आंतरिक प्रेरणा से धर्मसम्मत आचरण करता था। यहां यह उल्लेखनीय है कि भारतीयों के लिए धर्म आचरण का ही दूसरा नाम है– पति धर्म, पिता धर्म, पुत्र धर्म, गुरु धर्म, समाज धर्म आदि। धर्म माने कर्तव्य। किस के प्रति क्या कर्तव्य? यही आचरण–शिक्षा थी, जिसमें छूट केवल 'आपद् धर्म' के रूप में ही दी गई थी। उस पर हर कदम पर परिवार–धर्म के निर्वाह के लिए *महाभारत* उद्धृत कर दिया जाता था। यहां तक कि परिवार विखंडित न हो, इसके लिए महाभारत घर में रखना ही प्रायः निषिद्ध कर दिया जाता थी, जबकि रामायण बांचने के लिए अनिवार्य था। यही थी, प्रौढ़–साक्षरता। अशिक्षा के अंधकार के मध्य युग में भी रामायण बांचने लायक शिक्षा तो हर गृहिणी, हर लड़की, हर प्रौढ़ को चाहिए ही थी ताकि पारिवारिक सामंजस्य बना रहे और समाज विखंडित न हो।

यही कारण है भारत की हर भाषा में रामायण, गीता और *श्रीमद्–भगवद* गीता के अनेकानेक अनुवाद उपलब्ध होने के। एक ओर कर्तव्य–ज्ञान के लिए रामायण और गीता, दूसरी ओर जीवन में रस भरने के लिए कृष्ण–लीलाएं और रासलीलाएं। अनुमान लगाया जा सकता है कि धुर दक्षिण के प्रदेशों में और उत्तरपूर्व के मणिपुर जैसे प्रदेशों में रासलीलाएं समान रूप से क्यों लोकप्रिय हुईं? *गीत गोविंद* रचनाएं की हर प्रदेश के नृत्य में क्यों अपनाई गई। मीरा के भजन सुबुलक्ष्मी जैसी दक्षिण भारतीय गायिका की जुबान पर क्यों चढ़े। यही राज है, संचार–साधनों के और मुद्रण के अभाव के उन युगों में हमारी सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय भावात्मक–सांस्कृतिक एकता का।

वर्णाश्रम–व्यवस्था के विखंडन से पूर्व हमारे समाज में हर ब्राह्मण भी स्वयं में एक संस्था था, जो संतों–परिव्राजकों की तरह भिक्षा–दक्षिणा पर संतोष कर, समाज के शेष सभी वर्गों को जीवन की राह दिखाता था। अन्य व्यवसायों में जाने और इस वृत्ति में स्वार्थ के प्रवेश के साथ इस व्यक्तिगत संस्था का भी अंत हुआ और पाश्चात्य शिक्षा के साथ हमारे परिवारों के विखंडन के साथ, समाज भी विखंडित होता गया। तलाक–परित्याग, हिंसा–यौनहिंसा, हत्या–आत्महत्या और लूटपाट–अपराध के बाहुल्य की वर्तमान स्थिति विखंडित परिवार और विखंडित समाज की ही देन है। विखंडित समाज न तो व्यक्तियों के अकेलेपन की, असुरक्षा की स्थितियों का समाधान कर पाएगा, न शोषण–अन्याय मुक्त नवसमाज का निर्माण ही कर पाएगा। अपसंस्कृति की काट फिर किस राह संभव है?

निश्चय ही नई स्थितियों के अनुरूप, बदली सामाजिक परिस्थिति के अनुरूप और आधुनिक ज्ञान–विज्ञान, तकनीकी–प्रविधि के अनुरूप आज हमें नए ढंग की सामूहिक समाजशिक्षा की आवश्यकता है। इसके लिए आज उन्नत मीडिया (प्रिंट, इलेक्ट्रानिक दोनों) और अति उन्नत सूचना–प्रविधि हमें उपलब्ध हैं। कमी है तो केवल दिशा–निर्देशक आंतरित प्रेरणा–प्रविधि की और बाहर से किसी आदर्श नेतृत्व की। लेकिन आधुनिक समाजशिक्षा की तकनीक और उसकी योजनाबद्ध क्रियान्विति इन दोनों कमियों का समाधान खोज सकती है। कैसे? हमारे आज के चिंतन की यही दिशा होनी चाहिए। ❑

बी–27ए, सेक्टर 19
नोएडा–201301

गोस्टा

राजनारायण बोहरे

ढोरों के सख्त खुरों की चोट से उड़ती हुई गर्द के कारण आसपास कोहरा सा छा गया था – भूरा सा दानेदार कोहरा।

शाम तेजी से ढल रही थी। घर लौटते पटेल सोच रहे थे कि देखें गांव वाले कितने दिन यह व्यवस्था चला पाते हैं। हाल–फिलहाल गांव वालों के जी से बंधा जंजाल तो छूटा।

दरअसल पटेल को सुबह आज खुद अपने ढोर छोड़ने पड़े थे। वे तो सुबह आराम से बैठे दातून कर रहे थे कि पटेलिन ने उन्हें चेताया, 'लक्षमन के दादा, आज तिमई फिरा लाओ ढोरन खों। देखो तो सूरज देवता पगहिया भर चढ़ गए हैं। ढोर थान में बंधे रंभा रहे हैं।'

पटेल ने गंभीरता से पटेलिन को देखा। हाथ भर चूड़ियों और पांव भर पायलों से लदी–फदी पटेलिन ने भी हाथ से घूंघट तनिक–सा ऊंचा उठाके अनख से उन्हें निहारा, तो वे कुछ कहते–कहते रुक गए। सोचा इसी जनी–मांस (औरत) को कौन समझाए। वे फिर गले में पानी भरके गुड़–गुड़–गुड़ करने लगे। पटेलिन रुनझुन करती वहां से चली गई।

कटोरा भरे दूध में एक चमचा महेरी (मट्ठा में बनाए गए दलिये का व्यंजन) घोलकर पटेल ने घूंट–घूंट करके पीया और मूंछों पर हाथ फेरते हुए ढोरों की सार (पशुशाला) की तरफ चल दिए।

पटेल का बेटा लछमन सिंह अपने दो मईदारों (हलवालों) के साथ टगर (खेत) पर पानी देने भिनसारे ही निकल गया था। तब पटेल ने कितना मना किया था कि लल्ली एकाध मईदार को घर छोड़ जाते, पर लछमन नहीं माना। कहने लगा कि इस समय फसल में पानी की दरकार है, वहां जाना जरूरी है। ढोरों का क्या है, कोई भी चरा लाएगा।

'कोई' कौन है घर में जो चरा लाए। वे ही अकेले मर्द हैं घर में लछमन के बाद। सो लछमन की क्या फूट गईं दोनों कि दिखता नहीं। पटेल की उमर साठ पार कर ही है, अब वो अवस्था नहीं कि खोज (पशु) की पूंछ के पीछे भागते–दौड़ते फिरें।

रह गई बइयरबानियां (औरतें) सो वे तो हार में नहीं जा सकतीं। हालांकि कई घरों की बइयरों को भी मजबूरन ढोर–डंगरों को लेकर हार में भटकना पड़ता है। पर उनके यहां अभी ऐसी नौबत नहीं आई है, अभी तो पांच हाथ लंबे चार हाथ चौड़े पटेल विराजमान हैं घर में। सो बईयरवानी काहे को निकलेगी।

पटेल उन बच्छों–पठेरुओं (गाय–भैंस के बच्चों) को हार भेजना अच्छा समझते हैं जो अब मां का दूध नहीं चोखते क्योंकि थान पर बंधे–बंधे ढोरों के खुर बढ़ जाते हैं। धौरा बच्छा के भी ऐसे ही खुर हो गए थे। उसे खोलते समय उन्होंने देखा कि अब खुर घिसने लगे हैं। बाकी ढोर खोलकर उन्होंने सार के बाहर निकाले और किवाड़ उढ़का दिए।

बेंत से ढोरों को हांकते वे सैर पार करके गांव के बाहर पहुंचे ही थे कि उन्हें पंडित भैरों प्रसाद भी अपनी गायों के साथ आते दिखे। रामा–श्यामी हुई, तो दुखी भैरों प्रसाद जी बोल उठे थे – पटेल दद्दा, जो घंसू ग्यारो (ग्वाला) का मरो, सिगरे गांव में हाय दैया मच गई। 'उतै' के आदमिन के दिमाक सिरकार ने सड़ा दिए और इते कोई रहो नहीं गांव में, कै ग्यारई (ग्वाले का काम) कर सकें।

माथे पर तिलक और सफाचट सिर वाले पंडित भैरों प्रसाद बड़ी और बिना धुले लट्ठा की धोती पहने हुए थे। उमर में पटेल से चार साल छोटे होने के कारण वे पटेल को दद्दा कहते थे, अन्यथा आसपास के तमाम गांवों में उनके नाम का डंका बजता था। पटेल से बोलते समय ही वे बोलचाल की भाषा उपयोग करते थे अन्यथा तो संस्कृतनिष्ठ हिंदी में उनका संभाषण होता था।

पटेल ने निर्विकार भाव से पंडित को सूचना दी, 'देखो भैया ऊधमसिंह का जवाब लायो है। कल बमूरिया भेजो हतो, कै वहां से कोई ग्यारो मिल जाए तो लिवा लाओ।'

पंडित को यह समाचार मिला तो कुछ धैर्य मिला। उनका जो समय कथा–भागवत बांचने में जाता, या ब्याह–चौक का मुहूर्त निकालने में जाता, वह ढोर चराने में खर्च हो रहा है इन दिनों। उनका एक बेटा कस्बे में रहकर पढ़ रहा है बी.ए. में। वो यदि गांव में होता इन दिनों, तो भी काहे को ढोर चराने जाता। यही तो कमी मानते हैं पंडित नई पढ़ाई की। वे अक्सर कहते हैं कि 'ज्यादा पढ़ो तो घर से गए, कम पढ़ो तो हर से गए।'

ऊधम सिंह अपने खेतों पर मिल गया और ऐसी बात बताई कि दोनों चुप रह गए थे। बमूरिया के नारायण ग्वाले का लड़का किशोरी यहां आने को तैयार तो था, पर उसने एक ढोर पीछे पचास रुपया महीना ग्यारई मांगी थी। दिवाली पर कपड़े और चरोखर के लाने के अस्सी रुपया हर घर से लेना भी पहले से तय कर रहा था वह। ऊधम चुपचाप चला आया था उसकी बातें सुनकर। वह क्या, कोई भी होता तो लौट ही आता ऐसी शर्तें सुनकर।

लंबी सांस लेकर पटेल बोले – इन ससुरे लोगन ने सब मिटा दयो। पूरो को पूरो समाज बिगाड़ दओ। देखत जाओ गांव में तो मरही पड़ेगी – मरही (महामारी)।

लगभग सभी लोग पटेल के इस कथन से सहमत थे। वे लोग गंभीरता से इस समस्या पर विचार कर रहे थे कि लाल सिंह का लड़का प्रकाश भी वहां आ गया। अपने साथ चार खोज लिए वह 'ढे...ढे' करता चला आ रहा था। सब बुजुर्गों का पायलागी करके वह निकल रहा था कि पटेल ने उसे टोका – 'काहे पिरकास, तुमने का सोची, ग्यारे के बारे में?'

– 'हमें का सोचनो पटेल दाजू। हम तो सदा से अपने ढोर चरा रहे हैं।'

– 'अरे लल्ली, कछू दूसरन्ह (परायों) की भी सोचो', पंडित भैरों प्रसाद ने कहा था।

प्रकाश एक पल सोचता रहा फिर मुस्कुरा कर बोला – 'महाराज छिमा करियो, छोटे मुंह बड़ी बात। मेरी समझ में तो जा बात को एकई उत्तर है – गोस्टो!

'गोस्टो!' ऊधम चौंका था।

'हओ कक्का। ग्यारो तो तबई जा गांव में आयेगो, जब बाको पेट भरवे का इंतजाम पूरो होयेगो। हम सब खों मुलक (बहुत) महंगी पड़ेगो वो। गोस्टो तय कर लेंगे तो पूरो गांव निसफिकर हो जायेगो। ढोरन वाले हमारे तीस–पैंतीस घर हैं गांव में। हर घर पीछे एक दिन को काम पढ़ेगो, ढोर चरावे को। सब लोग बारी–बारी से ढोर चराएं पूरे गांव के। बाकी लोग अपने काम देखें। जो ही तो गोस्टो है न!'

पंडित भैरों ने जाने क्यों टालना चाहा। वे प्रकाश को ललचाते बोले – 'ऐसो काहे नहीं कर रहे तुम, कै तुम ही पूरे गांव के ढोर चराओ।'

'नई दाज्जू नई, हम नहीं चरा पाएंगे। गोस्टे में जरूर शामिल हो जाएंगे। गोस्टे से सच्चउ मुलक फायदा है। सिगरे गांव के खेतन–टगरन की मेड़ से लेके सिरकाऊ चरोखर तक ढोर चर सकेंगे और वजन भी कम पड़ेगो।'

पटेल और ऊधम ने कहा कि हम लोग हार में पहुंचकर मिल–बैठकर बात कर लेते हैं, लड़के का प्रस्ताव ठीक है। पटेल को वैसे कोई विरोध न था, पर बुजुर्गों की चली आ रही प्रथा को तो वे भूल गए और एक अदना सा लड़का याद रखे रहा, इसमें उन्हें अपनी हेठी नजर आ रही थी। पंडित भैरों प्रसाद जरूर सोच रहे थे कि भले महीना भर में एक दिन काहे न चराना पड़े, पर गांव में ढोर चराना उनका अपमान है। उन्हें झंझट सा दिख रहा था, इसलिए वे टाल रहे थे।

दोपहर को हार में जब लोग अपने–अपने ढोरों को पानी पिलाकर बरगद के नीचे आराम कर रहे थे, तभी गोस्टे की सारी बातें और नियम तय हो गए।

शाम को घर लौटते समय पटेल को आज का निर्णय अच्छा तो लगा था, पर उन्हें इस बात का अचरज था कि गांव की पुरानी प्रथाओं–रिवाजों को वे कैसे भूल गए।

घर लौटकर पटेल ने अपने ढोरों को यथास्थान बांधा और हाथ–पांव धोकर खटिया पर लेट गए। वे निखन्नी (बिना बिछौना) खाट पर ही लेट गए थे। जमाने को गालियां देते देर तक वे यही सोचते रहे कि क्या बुरा वक्त आ गया है कि घर में एक बंधुआ मजदूर तक नहीं रख पा रहे हैं, नहीं तो एक समय ऐसा भी था कि घर में आठ–आठ बेगारी काम करते थे।

पटेलिन की आवाज से वे चेते, उठे और अपने सांझ के कामों में लग गए।

अगले दिन भिनसारे से गोस्टा आरंभ हो गया। लोग अपने–अपने खोज (पशु) लेकर स्कूल के चौगान में जुटने लगे। वहां सबने अपने–अपने ढोर प्रकाश को सौंप दिए। ढोर चराने की पहली बारी प्रकाश की ही थी और उसके बाद के क्रम लिखकर पंडित भैरों प्रसाद ने सबको समझा दिया था।

अगले दिन सिब्बू की बारी थी और उसके अगले दिन पटेल दरयाव सिंह की। पटेल की तरफ से उनके मईदार (हलवारे) ने ढोर चराया।

एक महीना तक सब ठीक चला। पर अगले महीने लोगों ने लापरवाही करना शुरू कर दिया। पर काम चलता रहा।

उस दिन सत्तरवां दिन था गोस्टा आरंभ होने का।

लाठी से टिके खड़े प्रकाश ने आसमान की ओर ताका और सोचने लगा कि देखो तो सूरज पगहिया भर ऊपर चढ़ आया है। ढोर एक जगह थुब नहीं रहे हैं, इधर–उधर भाग रहे हैं। न तो सिब्बू खुद पबरा (आया) न उसके तीनों खोज नजर आए। बाकी सब लोग अपने–अपने खोज स्कूल के चौगान में छोड़कर कब के जा चुके थे। आज सिब्बू की बारी है न गोस्टे के ढोर चराने की, सो बाकी लोग काहे के रुकेंगे। ढोर सम्हराए और चलते बने सबके सब। रुकने का ठेका तो प्रकाश ने लिया है न, उमर में सब गोस्टेदारों से छोटा है और बाकी लोगों की तुलना में गरीब भी, सो हर आदमी उसी की बांह मरोड़ता है।

उसे आज काम था घर पर, इसलिए वह लगातार सोच में डूबा है कि क्या करे। वैसे सुबह से ही खुद के फंस जाने की आशंका थी, इसलिए भिनसारे ही महेरी में चार रोटी मसलकर वह कलेऊ कर चुका है। अम्मा के मना करते–करते चार रोटी छन्ना (कपड़ा) में बांधकर रोजाना की तरह लठिया पर लटकाए वह 'ढे... ढे, मने... मने' करता अपने ढोर टिटकारता चला आया था। यहां आकर अब वह खुद को फंसता हुआ महसूस कर रहा था।

प्रकाश बचपन से ही मेहनती है। इसी कारण उसका शरीर भी खूब कसरती है। उसकी आवाज सुनकर ही गांवभर के लोग रम्या देते हैं। मरख्या बैल और पड़ा तक उसकी क्रोधित आवाज सुनकर ठाड़े–ठाड़े मूतते हैं। खूब तंदुरुस्त शरीर होने से गांव भर में सबसे अच्छी डढ़ (दौड़) लगाने वाला है वह। उसकी उमर के कमरजी, टीकम और संपत जैसे तक उससे हैदस (भय) खाते हैं। हां, एक कमी है उसमें कि जब वह बोलता है तो हकलाता है। इसी कारण बाकी लोगों से वह पीछे रहता है। इसीलिए हर बात अपने मन में पहले वह कई बार बोलकर देख लेता है, फिर किसी गैर आदमी से बोलता है।

अब कितनी देर बाट जोहता रहे। अन्यमनस्क–सा होकर उसने ढोर हांके। गांव के गेंवड़े से निकलते–निकलते पीछे मुड़कर देखा तो सिब्बू के ढोर आते दिखे। अनायास ही सिब्बू के लिए उसके मुंह से गाली निकल पड़ी ... खुद तो नहीं पबरा और ढोर हांक दिए इते। मैं भी नई च... च... चरावे वारो। जाएं सारी कानी होत (कांजी हाउस) में।

सिब्बू की तीन बछियां और तीनों भैंसें आकर गांव के दूसरे ढोरों के साथ मिल गई थीं। वह 'टिच्च ... टिच्च' करता लंबरदार की रूंद (चरागाह) की ओर बढ़ चला। मन ही मन उसने तय किया कि कल ही वह गोस्टेदारों को रोक कर बात करेगा। किसी की दबियारी नहीं है उस पर। बराबर का गोस्टेदार है। पर लोग उसे जबरन दबाते हैं। तिलकुटी गनेश से इस गनेश तक एक महीना होने को आया, हर दूसरे दिन उसे ही ढोर चराना पड़ रहा है। किसी के घर में कथा है, तो किसी के घर में बच्चों को इंगरेसन (इंजेक्शन) लगना है, और किसी के घर मिजबान पाहुने आ गए हैं। एक अकेला वही है, जिसके घर अपनी बारी के दिन कोई काम नहीं पड़ता।

गांव के मुख्य रास्ते से ढोर निकल नहीं पाए थे कि पीछे से पों–पों की आवाज सुन वह घूमा। सरपंच कक्का की जीप आ रही थी, उसने ढोरों को एक तरफ किया तो जीप निकल गई, जीप में जवाहर भैया थे। उसने जवाहर भैया को बंदगी की जिसे जीप में बजते रेडुआ की वजह से वे सुन नहीं पाए। प्रकाश को बुरा नहीं लगा। उसने सोचा कि सच्ची है, एक तो जीप चलाने में काफी हुशियारी की जरूरत है और फिर ढोरों के ढिंग से निकलने में लापरवाही करने से ढोरों के कुच–पिच जाने का डर बना रहता है, इसलिए भी पूरा ध्यान जीप के हेंडल में लगाना पड़ता है। कोई बात नहीं, कौन छोटा हो गया वह जो जवाहर भैया ने नमस्कार का उत्तर नहीं दिया।

प्रकाश को याद है कि उसके दादा बहुत पहले एक छोटा–सा रेडू लाए थे, तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ था। उसमें से अच्छे–अच्छे गाने आते थे, घर भर उसके इर्द–गिर्द बैठकर रोज शाम को गाने सुनता था। रोज भिनसारे भजन रामयिन भी आती थी। उसे याद आया कि पिछले दिनों गांव के स्कूल में एक टीवी मशीन आई है, जिसमें गाने–नाचने वाले मर्द–बइयर दिखाई भी देते हैं। प्रकाश कई दफा पटेल दाज्जू के यहां गया है वह टीवी देखने। टीवी और सिनेमा एक से लगते हैं उसे – बस छोटे–बड़े का फर्क है। सुना है सरकारी टीवी पंद्रह हजार रुपये में आया है, इसलिए स्कूल के बजाए पटेल दाज्जू के यहां रखा है। क्या विश्वास कि कोई चोर बदमाश उठा ही न ले जाए। वैसे गरीब गुरबा की चीज थोड़े ही है ऐसी मशीन और हलका–पतरा आदमी ऐसे भिखरलाड़ करेगा की क्यों?

स्कूल के चौगान में मास्टर अब नए–नए खेल खिलाता रहता है गांव के लड़कों को। पुराने खेल जैसे सब भूल गए हैं। बस अकेली चौपड़ बची है, सो वह भी कभी कभार दिखती है। क्योंकि मास्टर जी कहते हैं – 'चौपड़ कर देय सौपड़, ताश कर देय नाश।' प्रकाश खड़ा–खड़ा देखता रहता है इन नए खेलों को। वैसे गांव के सब खेल उसे आते हैं। बचपन में वह गेंदगढ़ा, अंडा–डावरी, टीलापटीला, सोलहागोटी, अंटटोंट, कोंडल्ला, जंगाल साही पीछे देखे मार खाई, अंधरपड़ा, गिप्पी–फोड़ा और सबसे ज्यादा प्रचलित गिल्ली–डंडा बड़े होशियारी से खेल लेता है। इन खेलों का उस्ताद हो गया है वह। आंखों पर पट्टी बांधकर 'छियापाती' करने का खेल, 'अंधरपड़ा' उसे खूब पसंद है। लेकिन वह काम के बखत तो केवल काम करता है। उमर उसकी भी अभी केवल सत्रह बरस है मगर ढोरों की हारी–बीमारी से लेकर गाय–गोसली के काम में अच्छों–अच्छों के कान कुतरता है। पटेल दद्दा उसकी बातें

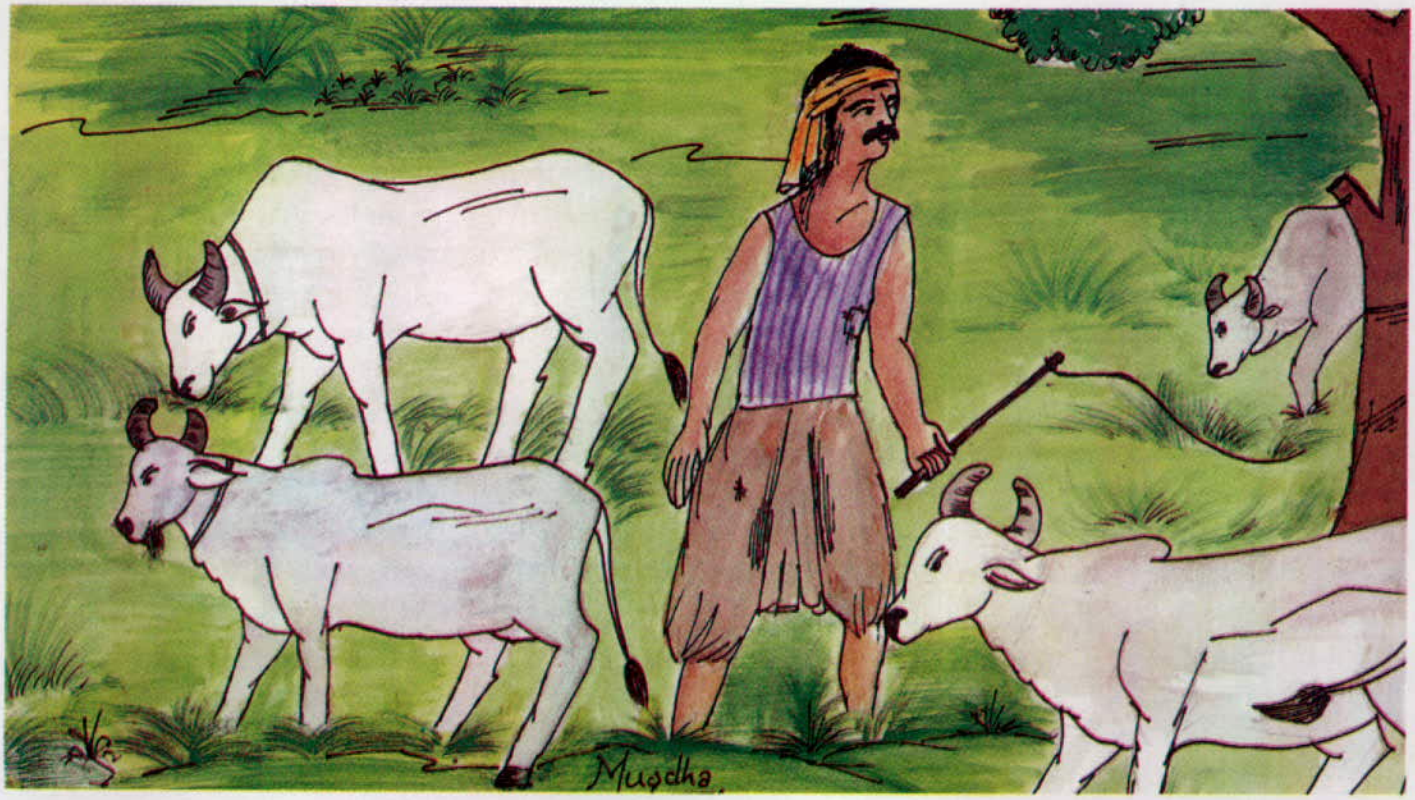

सुनकर उसके दादा से कहते हैं – 'पिरकास के दादा, तेरे मोड़ा के तो पेट में मूंछें हैं। तू जाये (इसे) पढ़ा–लिखा। जा की ग्यारई छुड़ा। ढोर डंगर को पिछ्याब करवो बंद करा।'

दादा ऐसे समय चुप रह जाते हैं। प्रकाश को खूब याद है पांच पंचों के बीच कैसे असलियत बताएं 'अपनी जांघ उघारी आपइ लाजन मारी।' गांव वाले तो हंसने के मीत हैं। पढ़ाई–लिखाई में पौ तो खरच होता ही है। घर के हैंसा पटा (बंटवारी) में मिली बीस बीघा धरती में इत्ती पैदावार कहां धरी है कि पढ़ने–लिखने की रईसी कराएं। फिर कलेट्टरी थोरी मिल जाएगी उनके लड़के को। पटेल दद्दा की तो बातें हीं बातें हैं। 'रो रो डुकरिया गीत गाए मोड़ा मोड़िन को हंसी आए' पटेल तो मूंछ में चावल खुरस कर बातें करते हैं। हाथ में मौजूद बीस बीघा जमीन में से पांच बीघा बिला इजाजत जोत है और पांच बीघा है पठा (ऊसर–अनुपजाऊ) जमीन। कायदे से जमीन है दस बीघा, सो उसमें कुआं नहर तो है नहीं कि सिंचाई हो सके, पूरी खेती मेवगत (मानसून) के भरोसे है। सरकारी कारिंदों को, किसान को किसान कितना भी हो झेल लेता है, पर महाजनों की तो पूरी की पूरी भीड़ उसे घेरे खड़ी है, अभिमन्यु की तरह।

दोपहर ढल चुकी थी। एक कट चुके खेत में ढोर घुसाकर वह निश्चित–सा खड़ा था। सिब्बू की ओसर भैंसें उसके पास आ गईं और उसकी लाठी से अपना सींग खुजाने लगीं। प्रकाश का स्नेह छलक उठा। सोचा, बेचारे जानवर तो प्रेम के भूखे हैं, इनको अपने मालिकों से क्या लेना–देना, नीच गांव के लोग ऊपर से कितना मीठा–मीठा बोलते हैं अच्छे–खासे लोग धोखा खा जाते हैं। इसी कारण उसने जब दो महीने पहले सब लोगों से मिलकर गोस्टा बनाने की सोची थी तो सब हंसी–खुशी सम्मिलित हो गए थे। ठीक भी था, हरेक के तीन–तीन चार–चार ढोर हैं, सब मिलाकर पचास हो जाते हैं। गोस्टा बन जाने के बाद हर गोस्टेदार की बारी पैंतीस दिन में आती है। अब आकर हालांकि उनके भीतर बदमाशियां प्रकट होने लगी हैं। पुराने जमाने में ऐसा नहीं था, हर आदमी ईमानदार था गोस्टे के प्रति। पुराने लोग बहुत सोच–समझ कर ऐसी परंपराएं बना गए थे जिनके कारण काम भी चल जाए और अपनापन भी बना रहे।

गोस्टे में तय हुआ था कि यदि कोई आदमी अपनी बारी पर ढोर चराने नहीं जा पाएगा तो वह अपने बदले किसी आदमी को भेज देगा। यदि किसी को नहीं भेज पाया तो वह प्रकाश से आग्रह करेगा कि वह उस दिन ढोर चराए। इसके बदले में वह प्रकाश को पांच रुपये देगा। सब गोस्टेदारों ने कितनी ही बार ऐसा किया मगर आज तक प्रकाश से किसी ने कोई हिसाब नहीं किया। वैसे भी वही अकेला है जो हार में ध्यान से ढोर चराता है, नहीं तो दूसरे लोगों में तो किसी को इमली के बीजों से बनी गोटियों से चंगा–अष्टा खेलते पाया जाता है, या कोई अपने साथ रेडू ले जाते देखा गया जो दिन भर बैठा रेडू से गाने सुनता रहता है। संझा (शाम) को जाकर होश आता है उन्हें तो पता लगता है किसी की बछिया नहीं है, किसी का पड़ा खो गया है। नेक–बहुत ढूंढा और वापस गांव आकर कह दिया आज तो फलां बछिया भिनसारे से ही चरने नहीं गई। झख मारके जिसकी बछिया या पड़ूरू होगी, वह खुद जाकर हार में भटकेगा और अपनी खोज ढूंढ़ेगा। गोस्टे की उस दिन की बारी वाला तो मजे से अपने घर में आराम करेगा। कितनी ही बार इस पर लड़ाई हुई हैं। प्रकाश सोचता

है कि ऐसी घटना दूसरे गोस्टेदारों की बारी पर ही क्यों होती है, प्रकाश की बारी वाले दिन क्यों नहीं। प्रकाश को तो ढोरों के बारे में वैसे भी बहुत बारीक जानकारियां हैं। उसे इतनी लगन है ढोर चराने की जब वह ढोर चराता है तो न उसे चंगा–अष्टा दिखते हैं न बेर–मकोरा।

प्रकाश ने खेत में से ढोर निकाले और सरकारी चरोखर की तरफ हांक दिए। यदि वह हार में नहीं आता तो घर पर समय काटना भी उसे मुश्किल होता है। हार जाने के चक्कर में ही उसने स्कूल छोड़ा था। चार किताबें उसने जैसे–तैसे पास कर ली थीं, उस साल पांचवें में था, इम्तहान देने जाना था, सो उसने दादा को मनाना शुरू कर दिया कि क्या मिला है पढ़–लिख लेने से? दादा मान गए ओर उसकी पढ़ाई छुड़ा दी। हालांकि आज वह टीवी देखते समय याद करता है कि पढ़ाई छोड़कर गलत किया उसने। यदि आगे पढ़–लिख लेता तो रामसिंगा, रमुआ की तरह मूरख बना न बैठा रहता। सब बातें समझता टीवी की।

प्रकाश के दादा बताते हैं कि पुराने जमाने में बड़ा प्रेम–नेम था गांव के लोगों में। गरीब–अमीर सब मिलजुलकर रहते थे। पहले शाम को गांव की वसीगत में एकाध के घर सब लोग इकट्ठा होते थे, वीर विकरमाजीत से लेकर नाहर दादा तक के लंबे किस्से–कहानी तीन–तीन दिनों तक चलते थे और लोग मन लगाकर सुनते थे। अब तो लोग सई–संजा सो जाते हैं।

शाम तक वह ढोरों को यहां–वहां हांकता रहा और यह भूल गया कि आज उसने घर से लाई रोटी नहीं खाई। भिनसारे की चार रोटियां पेट में पड़ी थीं, सो भूख ने दिन में उसे आज सताया नहीं। सूरज को देखकर उसने समय की अटकल लगाई – चार बजे होंगे। उनसे घर लौटने का मन बनाया और ढोरों को वापस गांव की तरफ मोड़ दिया।

* * *

घर पर अम्मा ने बताया कि नमक खत्म है। वह पसरट वाले की दुकान को उल्टे पैरों लौट पड़ा।

वह सिब्बू की दालान के बगल से निकल रहा था कि सिब्बू की आवाज सुनाई पड़ी – 'लच्छू सक्का, अपने खों तो किसमत से मुफ्त को ग्यारों प्रकास अच्छों मिल गयों है। हम सब तो मजे कर रहे हैं। सबरे कल जई कर रहे थे। सारे पिरकास खों हमने तो अंधरपड़ा बना रखो है।'

'सारो है तो पक्को ग्यारो। ढोर ऐसी चिंता से चराथे कि घरा लौट के ढोर एक तिनाम भी मौं में नहीं डारें।' यह लच्छू की आवाज थी।

'वो मूरख जा समझ रयो है कि हम सब काम में फंस के नहीं जा पा रहे। बमूरिया से ग्यारो लाते तो अपन तो बाबा हो जाते, वाये पैसा दे दे के।' यह ऊधम की आवाज थी।

वह चौंका। उसे लगा कि यहां तो सब के सब बैठे हैं और उसकी ही बातें हो रही हैं। उसका माथा सन्न रह गया। उन लोगों की बातें सुन–सुनकर वह बेचैन होने लगा। कितनी अच्छी व्यवस्था बनाई उस दिन उन्हीं लोगों ने बैठकर, और जब अमल करने की बात आई तो कैसा सरूप बिगाड़ दिया इन लोगों ने इस व्यवस्था का। हर व्यवस्था इसी कारण बिगड़ती होगी शायद।

'जाकी ग्यारई देख के लगथे कै जौ ठाकुर लालसींग की औलाद नहीं है' कहते हुए लच्छू हंसा, तो प्रकाश के तन बदन में आग लग गई थी। एक बार तो उसे विचार आया कि भीतर घुसकर सालों की खुपड़िया खोल दूं। पर तुरंत ही बुद्धि ने चेताया कि वह अकेला है और वे इतने सारे। फिर इस बात की आशंका है कि साले सब बदल जाएंगे और कहने लगेंगे कि वे उसके बारे में चर्चा ही नहीं कर रहे थे। वह चिंडार होकर सीधा निकल गया – 'काऊ दिन तुम्हें भी देखेंगे।'

उसने मन ही मन उन सबको जोरदार डांट लगाई।

परचूनी वाले से नौन लेते समय भी उसके कान में लच्छू की बात गूंज रही थी। उसे अपने खून में एक अजीब सी गरमी का अहसास हो रहा था।

अगले दिन स्कूल के चौगान में न प्रकाश था और न उसके ढोर। वह बहुत पहले अपने ढोर लेकर हार में चला गया।

बाकी गोस्टेदार खड़े–खड़े उसको कोस रहे थे, हर आदमी भीतर ही भीतर भली प्रकार अपनी गलती समझ रहा था।

पटेल दरियाव और पंडित भैरव प्रसाद हैरान थे प्रकाश की इस हरकत पर। सूरज पगहियां भर ऊपर चढ़ आया था। सर्दी की गुनगुनी धूप भी उन्हें चुभती–सी लग रही थी।

उस दिन प्रकाश दिनभर अपने ढोर चराता रहा और देखता रहा कि गांव के ज्यादातर लोग अपने–अपने ढोर लेकर हार में भटक रहे हैं।

वह उन सब से दूर–दूर रहा। शाम को जब घर लौटा तो बड़ा प्रसन्न था। वह अभी चाय के सरूठा भर ही रहा था कि पौर से आवाज आई तो पता लगा कि गांव का खवास उसे बुलाने आया है। दादा ने उसे बाहर से ही टरका दिया और अंदर आकर बताया कि गांव में इस गरीब मोहल्ले के लोग एक नया गोस्टा चालू कर रहे हैं जहां न कोई बड़ा होगा न छोटा।

लेकिन इस घटना ने गांवभर में हड़कंप मचा दी। पंडित भैरव प्रसाद और पटेल दरियाव गांव के लड़कों की शरारत पहले ही समझ चुके थे। अगली सुबह वे दोनों साथ–साथ प्रकाश के घर पहुंचे। प्रकाश के दादा उन्हें टाल न पाए। उन्हें आदर सहित बिठाया और आने का प्रयोजन पूछा, हालांकि उन्हें पता था कि ये लोग प्रकाश से मिलने आए हैं। पटेल ने दादा से गांव के छोकड़ों की सारी कारस्तानी कह सुनाई और उन्हें वचन दिया कि उन लड़कों की मनमानी वह नहीं चलने देंगे। जिन्हें गोस्टा में रहना है, वे अपनी बारी आने पर ढोरों को चराने ले जाएं या गोस्टे से बाहर जाएं। हां, किसी की सच्ची हारी–बीमारी हो, तो वह स्वयं इसके बदले अपने परिवार या किसी नातेदार को उसकी जगह जाने को कहे। दूसरा कोई रास्ता नहीं। इस गोस्टे में न कोई बड़ा होगा न छोटा। प्रकाश देहरी के दरवाजे से लगा बाहर हो रही बातें सुन रहा था। वह कहां चाहता था कि गोस्टा टूटे। न ही उसके दादा ऐसा चाहते थे। उसे पटेल की बात में आशा की एक नई किरण दिखाई दी। वह बैठक में जाने और मन ही मन फिर से गोस्टा शुरू करने की तैयारी करने लगा। ❑

एल 19 हाउसिंग बोर्ड
कालोनी, दतिया (मप्र)

ग़ज़लें

विज्ञान व्रत

एक

एक सवेरा साथ रहे
कोई बच्चा साथ रहे

एक भरोसा साथ रहे
कोई घर का साथ रहे

वक्त बुरा है ऐसे में
कोई अपना साथ रहे

जब खुद को ताबीर करूं
तेरा सपना साथ रहे

मैं तनहा लौटा आख़िर
कोई कितना साथ रहे

दो

उसका चेहरा अपना था
बहुत बड़ी दुर्घटना था

उनसे रोज़ उलझना था
अपना सर भी रखना था

एक दफ़ा यूं मिटना था
खुद को फिर से लिखना था

जाने क्यूं ख़ामोश रहा
जिसको सब कुछ कहना था

खुद टूटा सा ख़्वाब सही
लेकिन सबका सपना था

तीन

आज बगावत सच कहना
मेरी फ़ितरत सच कहना

कैसे बोले झूठ भला
जिसकी आदत सच कहना

आप बचे हैं कहने को
आप तो हज़रत सच कहना

गर उसको अल्फ़ाज मिले
उसकी हसरत सच कहना

चुप रहना मर जाना है
और कयामत सच कहना

चार

तुमने जो पथराव किए
हमने उनके घाव जिए

बचपन का दोहराव जिए
हम काग़ज़ की नाव जिए

वो हमसे अलगाव जिए
यानी एक अलाव जिए

सुलझाने को एक तनाव
हमने कई तनाव जिए

जिसको मंज़िल पाना है
वो क्या ख़ाक पड़ाव जिए

पांच

सुनने और सुनाने को
रख मेरे अफ़साने को

मुझ पर कई उधार चढ़े
एक उधार चुकाने को

पहले अपना साथ निभा
सबका साथ निभाने को

उस दाने की किस्मत आह
तरसा दाने–दाने को

आख़िर मेरा रंग लिया
उसने रंग जमाने को

छह

चुप रहता था क्या करता
वो तनहा था क्या करता

कोई भी पहचान नहीं
शहर नया था क्या करता

उसका कोई नाम न था
सिर्फ़ पता था क्या करता

आख़िर उसको मौत मिली
सच कहना था क्या करता

वैसे वो सुकरात न था
ज़हर बचा था क्या करता

एन–138, सेक्टर 25, नोएडा–201301

भागीदारी
नागरिक-सरकार साझेदारी
आइये, इस स्वतन्त्रता दिवस को हम नागरिक-सरकार साझेदारी के कार्यक्रम - ''भागीदारी'' की सफलता को व दिल्ली को और बेहतर, खूबसूरत और अधिक सुविधा सम्पन्न बनाने के संकल्प के साथ मनायें।
श्रीमती शीला दीक्षित
माननीया मुख्य मंत्री, दिल्ली
मेरी दिल्ली
मैं ही संवारूं
दिल्ली
सरकार
DIP/958/2002/AK&I

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना

डा. महीपाल

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना से पहले मजदूरी रोजगार सृजन के दो मुख्य कार्यक्रम थे सुनिश्चित रोजगार योजना और जवाहर ग्राम समृद्धि योजना। इसमें कोई दो राय नहीं है कि इन कार्यक्रमों ने ग्रामीण जीवन स्तर को सुधारने में काफी हद तक योगदान किया। लेकिन महसूस किया गया कि ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न मजदूरी कार्यक्रमों को मिलाकर एक ऐसा कार्यक्रम शुरू किया जाय जो खाद्य संरक्षण, अतिरिक्त मजदूरी रोजगार तथा ग्रामीण ढांचे की देखभाल भी साथ–साथ कर सके। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना शुरू की गई। यह कार्यक्रम केंद्र पोषित कार्यक्रम है। इसमें केंद्र सरकार की भागीदारी 75 प्रतिशत है तथा राज्यों की भागीदारी 25 प्रतिशत। केंद्रशासित प्रदेशों में केंद्र सरकार शत प्रतिशत धन मुहैया कराएगी। अनाज राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों को मुफ्त दिया जाएगा।

इस योजना के अंतर्गत गरीबी रेखा से नीचे रह रहे सभी व्यक्ति लाभार्थी होंगे। लेकिन रोजगार प्रदान करते समय कृषिगत मजदूर, गैर कृषिगत अकुशल मजदूर, सीमांत किसान, महिलाएं, अनुसूचित जाति तथा जनजाति के सदस्य और समाज के अन्य कमजोर वर्गों को प्राथमिकता दी जाएगी। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 30 प्रतिशत रोजगार के अवसर महिलाओं के लिए आरक्षित किए गए हैं।

योजना के अंतर्गत कुल धन राशि खाद्यान्न सामग्री का पांच प्रतिशत ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा अपने पास रखने का प्रावधान है। ताकि इस राशि और खाद्यान्न को प्राकृतिक आपदाओं से उत्पन्न समस्याओं से निपटने के लिए उपयोग किया जा सके।

खाद्यान्नों का एक निश्चित प्रतिशत स्पेशल कम्पोनेंट के लिए भी आरक्षित है ताकि इसको केंद्र सरकार या राज्य सरकार प्राकृतिक आपदाओं के दौरान उपयोग कर सके।

उपर्युक्त प्रावधानों के बाद जो राशि तथा खाद्यान्न इस योजना के अंतर्गत बचते हैं इनको प्रथम प्रवाह और द्वितीय प्रवाह में बांटा गया है, जो निम्न प्रकार है।

योजना का प्रथम प्रवाह पंचायत समिति, क्षेत्र, पंचायत, मंडल पंचायत (पंचायतीराज व्यवस्था का मध्य स्तर) जिला पंचायत द्वारा क्रियान्वित किया जाएगा। योजना की 50 प्रतिशत राशि और खाद्यान्न इस प्रवाह के लिए आवंटित है। इस 50 प्रतिशत का 40 प्रतिशत जिला पंचायत और 60 प्रतिशत पंचायत समिति को आवंटित होता है।

इस योजना का दूसरा प्रवाह ग्राम पंचायत द्वारा क्रियान्वित किया जाता है। शेष 50 प्रतिशत बची राशि और खाद्यान्न को जिला पंचायत द्वारा ग्राम पंचायतों में आवंटित किया जाएगा। प्रत्येक गांव को एक निश्चित राशि तथा खाद्यान्न मिलने का प्रावधान है।

कार्यक्रम के अंतर्गत 30 प्रतिशत लाभ महिलाओं के लिए आरक्षित है तथा 22.5 प्रतिशत आवंटन अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के परिवार जो गरीबी रेखा से नीचे हैं, उनके लिए आवंटित है।

कार्य तथा गतिविधियां

प्रथम प्रवाह के अंतर्गत मृदा और नमी संरक्षण, लघु सिंचाई, पेयजल स्रोतों का नवीकरण तथा भूजल को बढ़ाना, स्वतः रोजगार योजनाओं के अंतर्गत संरचनात्मक विकास, तालाबों की सफाई कराना तथा अन्य आमदनी बढ़ाने वाली गतिविधियां कार्य के रूप में ली जा सकती हैं।

लेकिन धार्मिक प्रयोजनों आदि के लिए भवन, स्मारक, स्मृति स्थल, प्रतिभा, मूर्ति, स्वागत द्वार, बड़े पुल, हायर सेकेंडरी स्कूल, कालेज बनाने तथा सड़क पर तारकोल आदि कार्य करने की अनुमति नहीं है।

योजना के द्वितीय प्रवाह के अंतर्गत स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के लिए संस्थागत सहायता, पंचायतों में कृषि कार्यों के लिए आपेक्षित ढांचा, शिक्षा और स्वास्थ्य के लिए सामुदायिक ढांचागत सुविधा तथा अन्य सामाजिक और आर्थिक ढांचा, आदि गतिविधियां कार्य के रूप में ली जा सकती हैं।

योजना का एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह है कि ग्रामसभा की अनुमति में ग्रामपंचायत अपने स्तर पर एक लाख रुपये तक का कार्य या स्कीम स्वयं लागू कर सकती हैं।

योजना के अंतर्गत नया कार्य करने या परिसंपत्तियों का जीवन बढ़ाने के लिए पंचायतें चेरटेबल संस्थाओं, स्वैच्छिक संस्थाओं, प्रवासी भारतीय और व्यक्तियों से दान ले सकती हैं। यही नहीं राष्ट्रीय वित्त आयोग, राज्य वित्त आयोगों, राज्य सरकार से जो साधन प्राप्त होंगे उनको भी योजना के साधनों के साथ मिलाकर रोजगार और परिसंपत्ति सृजन करना है।

कार्ययोजना

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला पंचायत अपने स्तर पर कार्य योजना तैयार करेंगी। कार्य योजना के अंतर्गत वही कार्य किए जाएंगे जो 'कार्ययोजना' का हिस्सा होंगे। कार्य योजना हर वर्ष फरवरी माह में पूरी हो जानी चाहिए।

कार्ययोजना में पारदर्शिता, उत्तरदायित्व एवं सामाजिक नियंत्रण के लिए सामाजिक आडिट का प्रावधान भी है। कार्यक्रम की कार्य योजना को ग्रामसभा के सामने रखने का प्रावधान है। ग्रामसभा की बैठक हर तिमाही होगी।

संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार सृजन और परिसंपत्तियों के सृजन के साथ–साथ प्राकृतिक आपदाओं में समाधान के लिए एक प्रयास है। लेकिन इस प्रयास की सफलता काफी हद तक पंचायतों के नेतृत्व और ग्रामसभा की जागरूकता पर निर्भर करती है। ❑

1661, लक्ष्मीबाई नगर, नई दिल्ली

पंचायत मेला

पंचायतीराज सुदृढ़ीकरण की दिशा में एक अभिनव प्रयोग

मोहन शंकर जानी

पंचायतीराज व्यवस्था में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सुदृढ़ करने के लिए विद्याभवन सोसायटी, उदयपुर द्वारा सन् 1997 में स्थानीय स्वशासन एवं उत्तरदायी नागरिकता संस्थान की स्थापना की गई थी। पिछले पांच वर्षों से संस्थान उदयपुर जिले के पंचायतीराज जनप्रतिनिधियों के लिए क्षमता संवर्द्धन कार्यक्रम आयोजित कर रहा है।

मेले के उद्देश्य

- संस्थान द्वारा प्रशिक्षित जनप्रतिनिधियों से संपर्क एवं संवाद कायम करना।
- जनप्रतिनिधियों की समस्याओं के निराकरण हेतु अधिकारियों के साथ खुली चर्चा करना।
- पंचायतीराज से संबंधित नवीनतम जानकारियां उपलब्ध कराना।
- संस्थान की नवीनतम गतिविधियों से जनप्रतिनिधियों को अवगत कराना।

मेले का आयोजन

संस्था द्वारा प्रतिमाह उदयपुर जिले की 11 पंचायत समितियों में से किसी एक पंचायत समिति मुख्यालय पर बारी–बारी से मेले का आयोजन किया जाता है। इन मेलों में

पंचायतीराज के जनप्रतिनिधियों के अतिरिक्त क्षेत्रीय विधायक, प्रधान, विकास अधिकारी तथा विभिन्न संबंधित विभागों के अधिकारीगण भाग लेते हैं। संस्था द्वारा अब तक 20 मेले विभिन्न पंचायत समिति मुख्यालयों पर आयोजित किए जा चुके हैं। प्रत्येक मेले में औसतन 120 जनप्रतिनिधि भाग लेते हैं जिनमें कम से कम 30 प्रतिशत महिला पंचों–सरपंचों की भागीदारी होती है।

मेले के मुख्य बिंदु

मेले के प्रारम्भ में सर्वप्रथम विकास अधिकारी उन नवीनतम योजनाओं की जानकारियां देते हैं, जो अक्सर सरपंच, पंच तक नहीं पहुंच पाती हैं। मेले में विकास अधिकारी जब योजनाओं के लाभ को स्पष्ट करते हैं तो बहुत से सरपंच, पंचों के मुंह यह कहते सुना जाता है कि सरकारी पत्र तो आया था लेकिन योजना के बारे में पूरी बात समझ में आज ही आई।

विकास अधिकारी के पश्चात ब्लाक शिक्षा अधिकारी अपने क्षेत्र में शिक्षा की प्रगति तथा समग्र साक्षरता हेतु किए गए अपने प्रयास के बारे में बताते हैं। जनप्रतिनिधियों से आग्रह किया जाता है कि वे शिक्षा से वंचित बालक–बालिकाओं को स्कूलों से जोड़ने के लिए पहल करें। इसी कड़ी में अन्य अधिकारी बिजली, सार्वजनिक निर्माण आदि से संबंधित कार्य प्रगति का विवरण प्रस्तुत करते हैं।

खुली चर्चा

यह मेले का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम कहा जा सकता है। इस समय जनप्रतिनिधि अपनी समस्याओं तथा अपनी पंचायतों में किए गए अभिनव प्रयोगों को सदन के समक्ष रखते हैं।

जनप्रतिनिधियों तथा उनके कार्यों में आई समस्याओं के बारे में वे कभी–कभी अपना गुस्सा प्रधान, विकास अधिकारी, ग्राम सचिव आदि पर उतारते हैं तथा समस्या के निदान पर जोर देते हैं। उपस्थित अधिकारियों द्वारा समस्या के विभिन्न पहलुओं के बारे में बताया जाता है तथा कई समस्याओं के हल का आश्वासन भी वहीं सदन में दे दिया जाता है।

संस्थान से प्रशिक्षित जनप्रतिनिधियों की एकता इस खुले मंच के समय देखते ही बनती है। आदिवासी महिलाएं कम पढ़ी–लिखी होने पर भी केवल अपने प्रशिक्षण के आधार पर पुरुषों से भी आगे बढ़कर निर्भीकता से अपने विचार रखती हैं। प्रशिक्षण के पहले जो महिलाएं संस्थान में घूंघट निकालकर आईं थीं वे भी मेले के खुले मंच पर बिना घूंघट के अपने विचार प्रकट करने में बिलकुल झिझक महसूस नहीं करती हैं, महिला सशक्तीकरण की दिशा में यह कदम प्रशंसनीय पहल के रूप में देखा जाना चाहिए।

इस तरह संस्थान खुली चर्चा के द्वारा प्रशिक्षित जनप्रतिनिधियों को एक गैरसरकारी अनौपचारिक मंच प्रदान करता है जिससे पंचायतीराज की सफलता के रास्ते खुलते हैं।

चमत्कारों की वैज्ञानिक व्याख्या

मेले में मनोरंजन के माध्यम से अंधविश्वास को दूर करने का प्रयास भी किया जाता है। आजकल लोग विभिन्न तरीकों से ग्रामीण भाइयों को अपनी 'हाथ–सफाई' का करतब दिखाकर लूटते हैं। अक्सर सुनने में आता है कि फलां संत यज्ञ कुंड में स्वतः ही अग्नि प्रज्ज्वलित कर चकित कर देते हैं। मेले में बताया जाता है कि ऐसा करना कोई बड़ी बात नहीं है। यह तो वैज्ञानिक प्रयोग मात्र है। इसी प्रयोग को ट्रे में स्वतः आग प्रज्ज्वलित कर जनप्रतिनिधियों को चकित कर दिया जाता है तथा बताया जाता है कि यह एक रासायनिक क्रिया मात्र है जिसमें पहले पोटैशियम परमेंगनेट रखा हुआ था तथा ऊपर से घी जैसा दिखने वाला पदार्थ (ग्लिसरीन) डाला गया जिसकी क्रिया स्वरूप ट्रे में रखी सामग्री अपने आप जलने लगी। इसी प्रकार कुछ और चमत्कार दिखाकर उनकी वैज्ञानिक व्याख्या की जाती है ताकि जनप्रतिनिधि स्वयं जागरूक होकर ग्रामवासियों को ठगों तथा असामाजिक तत्वों के जाल से बचा सकें।

फिल्म प्रदर्शन

मेले में पंचायतीराज से संबंधित एक घंटे की फिल्म का प्रदर्शन किया जाता है। 'गांव नहीं किन्हीं पांच का' जैसी फिल्में प्रदर्शित की जाती हैं जिनमें सरपंचों तथा पंचों को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है तथा वे उन कठिनाइयों का मुकाबला कैसे करते हैं, दिखाया जाता है। महिला सरपंचों–पंचों को उनके ही परिवार वालों, विशेषकर अपने पतियों द्वारा सताए जाने के मार्मिक दृश्य जनप्रतिनिधियों के लिए नई दिशा प्रशस्त करते हैं। उनमें कठिन परिस्थितियों में काम करने का उत्साह और साहस जागृत होता है।

प्रदर्शनी

मेला प्रांगण में प्रदर्शनी का भी आयोजन किया जाता है जो जनप्रतिनिधियों तथा राजकीय अधिकारियों के लिए विशेष आकर्षण का केंद्र होती है। प्रदर्शनी में विभिन्न चित्रों और चार्टों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं को दर्शाया जाता है। पंचायतीराज से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर संस्था द्वारा समस्याओं को अंकित कर पोस्टर बनाए जाते हैं, जैसे – जनसंख्या के पोस्टर में दो चित्र बने हुए हैं। चित्र के ऊपरी भाग में ग्रामीण पति–पत्नी बैलगाड़ी में अपने सात–आठ बच्चों के साथ अत्यधिक कठिनाई से बैठ पा रहे हैं। वहीं नीचे दूसरे चित्र में एक बालक तथा एक बालिका के साथ माता–पिता आराम से प्रसन्न मुद्रा में बैठे दिखाई देते हैं। इसी प्रकार वनों की कटाई, पंचायत की बैठकों का संचालन आदि कई विषयों पर बने पोस्टर तथा चार्ट प्रदर्शित किए जाते हैं ताकि जनप्रतिनिधि विभिन्न समस्याओं के बारे में जानकारी हासिल कर सकें।

इस प्रकार के मेलों द्वारा जनप्रतिनिधियों का अनौपचारिक प्रशिक्षण तो होता ही है, उन्हें पंचायत समिति तथा जिला परिषद स्तर के जनप्रतिनिधियों यथा – प्रधान, विधायक, जिला परिषद सदस्य आदि से रूबरू होकर अपनी पंचायत की समस्याओं को प्रस्तुत करने का मौका भी मिलता है। आदिवासी महिला जनप्रतिनिधियों का उत्साह तो देखते ही बनता है जो दूर–दूर के ग्रामीण अंचलों से मेले में भाग लेने आती हैं। ❑

प्रशिक्षण अधिकारी
स्था. स्व. एवं ज.ना.सं.
विद्याभवन सोसाइटी, उदयपुर–313001

सफलता की कहानी - दो

शाहबाद अंचल में लोक जुंबिश का अभिनव प्रयास

घनश्याम वर्मा

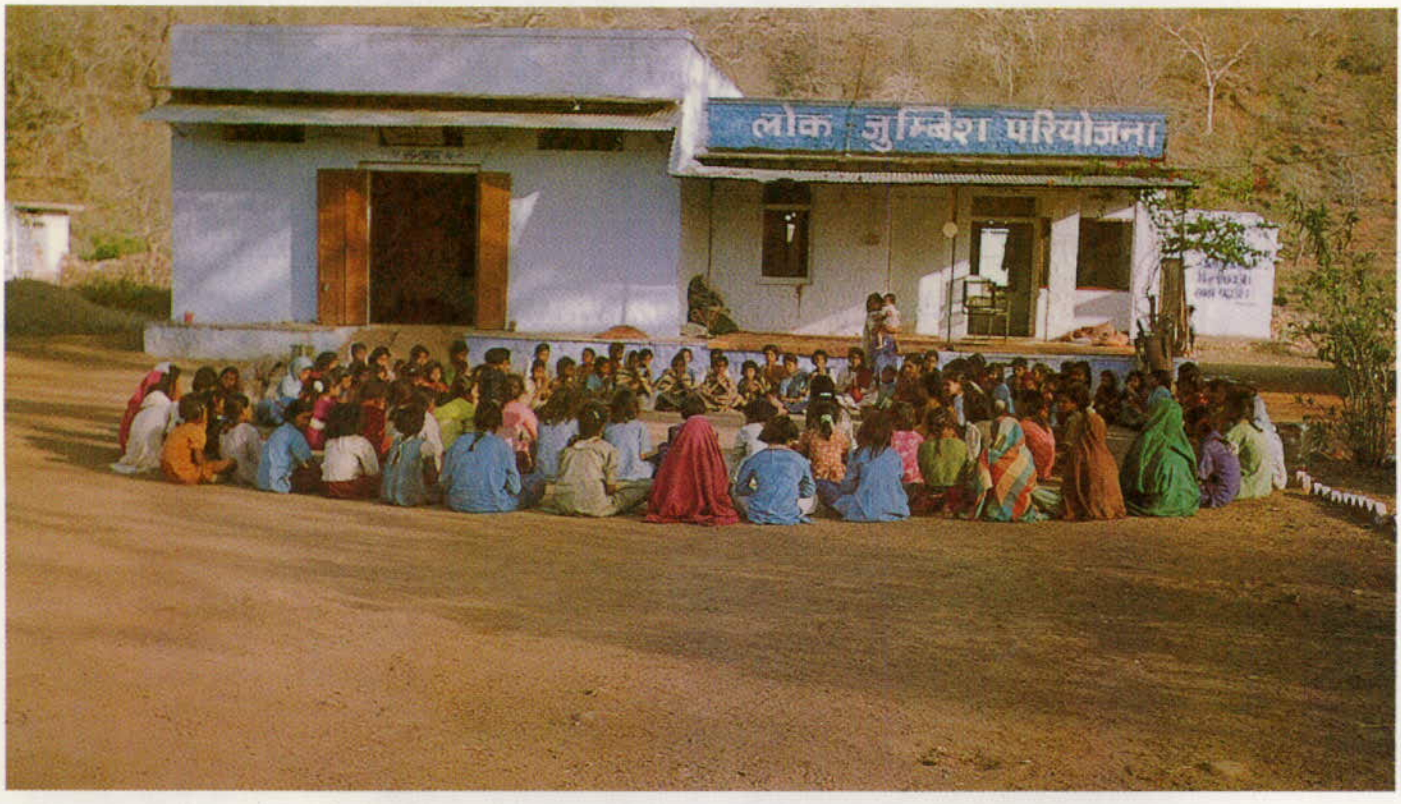

राजस्थान के दक्षिण पूर्वी भू-भाग पर स्थित हाड़ौती अंचल के बारां जिले का आदिवासी बाहुल्य किशनगंज-शाहबाद क्षेत्र प्रगति की दौड़ में प्रदेश के अन्य क्षेत्रों से कतई पीछे नहीं रहना चाहता है। एक जमाना था जब इस क्षेत्र में निवास करने वाली सहरिया आदिम जनजाति के परिवारों में साक्षरता का प्रतिशत नगण्य था। पांचवीं तक पढ़ा-लिखा सहरिया मिलना भी मुश्किल होता था। परंतु आज वह स्थिति नहीं रही। इस क्षेत्र में अब शासन की विभिन्न योजनाओं के कारण सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक तथा ढांचागत सुविधाओं के विकास से आमूलचूल परिवर्तन आ चुका है।

जिले के शाहबाद अंचल में संचालित दस सीनियर सेकेंड्री एवं सेकेंड्री स्कूलों के अलावा लोक जुंबिश परियोजना के अंतर्गत संचालित 108 सहज शिक्षा केंद्रों तथा शिक्षा मित्र केंद्रों, मामोनी की संकल्प संस्था द्वारा संचालित 20 जगार स्कूलों, सहरिया परियोजना के तहत कार्यरत 10 मां बाड़ी केंद्रों, 62 शिक्षाकर्मी स्कूलों, 27 राजीव गांधी पाठशालाओं, 49 प्राथमिक तथा 40 उच्च प्राथमिक विद्यालयों के अलावा एक संस्कृत उ.प्रा. विद्यालय तथा एक आदिम जाति सेवक संघ द्वारा संचालित उच्च प्राथमिक विद्यालय इस पिछड़े हुए सीमावर्ती ब्लाक में शिक्षा की ज्योति प्रज्ज्वलित कर रहे हैं। इस ब्लाक के 165 गांवों में से 113 गांव ऐसे हैं, जिनके शत-प्रतिशत बालक-बालिकाओं का किसी न किसी शिक्षण संस्था में नामांकन हो चुका है, जो इस जनजाति बाहुल्य क्षेत्र की एक उल्लेखनीय उपलब्धि है।

लोक जुंबिश परियोजना द्वारा हाल ही में इस क्षेत्र की सहरिया बालाओं को शिक्षा सुविधा प्रदान करने के लिए सात माह की अवधि का एक आवासीय शिक्षण शिविर आरंभ किया गया। अप्रैल माह में आयोजित शाहबाद उत्सव के अवसर पर आरंभ हुए इस शिविर में दूरस्थ गांवों की 9 से 14 वर्ष आयु की 111 सहरिया बालाओं ने नामांकन कराया। शिविर में सुविधा की दृष्टि से इनके सात समूह बनाए गए हैं

और प्रत्येक समूह की एक प्रभारी अध्यापिका को इन बालिकाओं को निर्धारित पाठ्यक्रमानुसार शिक्षण के साथ–साथ इनके चारित्रिक विकास तथा इनकी अभिरुचियों को मद्देनजर रख संस्कारयुक्त नैतिक शिक्षा देने के प्रयास किए जा रहे हैं। सहराना बस्तियों में घास–फूस से बने कच्चे घरों में रहने वाले सहरिया परिवारों की इन बालिकाओं को गांवों से लाकर वैकल्पिक शिक्षण शिविर में दिन रात रखना, पढ़ाना, लिखाना और उनके बौद्धिक तथा शारीरिक विकास के प्रयास करना दुसाध्य कार्य था। परंतु परियोजना कर्मियों तथा प्रशिक्षकों के कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप यह शिक्षण शिविर सफलतापूर्वक संचालित हो रहा है।

परियोजना समन्वयक किरन डोगरा ने जानकारी देते हुए बताया कि शिक्षा दर्पण सर्वे तथा लोक जुंबिश के शाला मानचित्रण सर्वे में 550 बालिकाओं को सूचीबद्ध किया गया था, जिनमें से 111 बालिकाओं को गांवों से यहां लाकर पंजीबद्ध किया गया। उन्होंने बताया कि शुरू में इन जनजाति बालिकाओं को संभालना बड़ा मुश्किल कार्य था। इन्हें स्नान करना तक पसंद नहीं था। ऊधम मचाती थीं, मैस में खाना खाते समय रोटियां भी छुपाकर रख लेती थीं, जिन्हें रात को चुपके से खा लेती थीं।

इन बालिकाओं की आदतों तथा व्यवहार में अब आमूलचूल परिवर्तन आ चुका है। ये लड़कियां हिंदी और अंग्रेजी की वर्णमालाएं सीख चुकी हैं। गिनती तथा साधारण जोड़ बाकी करने लगी हैं। इनका उच्चारण बहुत साफ सुथरा है। इनमें से अधिकांश लड़कियां अंग्रेजी के शब्दों को बहुत अच्छी तरह बोलने लगी हैं। बाहर से आने वाले अतिथियों का गुड मार्निंग सर, गुड इवनिंग सर तथा नमस्कार और प्रणाम सर कह कर अभिवादन करती हैं। इनमें से कई अपना नाम अंग्रेजी में भी लिख लेती हैं। सभी ने साइकिल चलाना सीख लिया है। फुटबाल, कबड्डी आदि खेलों में इनकी खूब रुचि है। ये अब कढ़ाई बुनाई भी सीख रही हैं। अब ये प्रतिदिन स्नान करती हैं और साफ–सुथरे कपड़े पहनने लगी हैं।

प्रशिक्षण शिविर प्रभारी नूर मोहम्मद ने बताया कि यह शिविर परियोजना के नवाचारों में से एक अभिनव प्रयास है। उन्होंने बताया कि शिविर की बालिकाओं को प्रतिदिन सुबह पांच बजे उठना होता है। प्रातः सात बजे से शिविर की गतिविधियां आरंभ हो जाती हैं। व्यायाम एवं प्रार्थना सभा के बाद इन्हें सुबह का भोजन दिया जाता है। दिन में 11 से डेढ़ बजे तक प्रथम शिक्षा सत्र में कक्षाएं होती हैं। तत्पश्चात् डेढ़ घंटे का विश्राम और तीन से पांच बजे तक दूसरा शिक्षा सत्र, पांच से सात बजे तक खेलकूद एवं सायंकालीन भोजन, तदुपरांत सात से साढ़े आठ बजे तक चेतना सत्र एवं अभ्यास कार्य होता है। अधिकांश लड़कियां दिन में कई बार होम वर्क भी कर लेती हैं। उन्होंने बताया कि जो लड़कियां आरंभ में इस शिविर में आने के बाद अपने माता–पिता तथा भाई–बहनों की याद करके रोती थीं या यहां से भागने की जुगत में रहती थीं, वे ही अब इस शिविर में पूर्ण अनुशासन एवं रुचि के साथ ज्ञानार्जन करने के साथ–साथ नियमित अभ्यास एवं व्यवस्थित दिनचर्या अपनाकर रह रही हैं।

अधिकांश छात्राओं ने बताया कि उनके परिवार की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय है। किसी के पिता तो किसी की माता मेहनत मजदूरी करके परिवार का पेट पालते हैं। ज्यादातर बालिकाओं ने अपने भाई बहनों की संख्या चार–पांच बताई। केलवाड़ा की सुगना (11) ने संकोच करते हुए बताया कि वह विवाहित है और उसके पिता ने आठ साल की उम्र में ही उसकी शादी कर दी थी। सेमली फाटक की अनीता सहिरया (14) को तो उसके माता पिता इस शिविर से यह कहकर ले गए कि उसे अपने रिश्तेदार के यहां एक विवाह कार्यक्रम में जाना है और गांव में ले जाकर उन्होंने अनीता का विवाह करवा दिया तथा सप्ताह भर बाद वापस शिविर में पहुंचा दिया। देवरी की राधा ने बताया कि वह गांव के स्कूल में पढ़ने जाती थी, लेकिन चौथी के बाद उसके मां बाप ने पढ़ाई छुड़वाकर उसे घर बैठा दिया था। शाहबाद की लक्ष्मी, तिपरगा की कमलेश, पेनावद की बसंती और द्वारका गांव में गिल्ली डंडे खेलती थीं और घर का कामकाज करती थीं। परंतु आज ये सभी बालिकाएं यहां आवासीय शिक्षण शिविर में पूरा मन लगाकर पढ़ रही हैं। शिविर की प्रधानाध्यापिका नजमा अपनी सहयोगी अध्यापिकाओं उर्मिला सौदा, बसंती नायक, पुष्पा बैरागी, नलीना पारीया, अनिता महावर तथा अनुराधा सोनी के सहयोग एवं कठिन परिश्रम से इस अनपढ़ बालाओं को सुघड़ बना रही हैं।

परियोजना के तीन सदस्यीय संयुक्त समीक्षा दल के प्रतिनिधियों ने शिविर का अवलोकन कर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा था कि इस कैंप का अवलोकन करने के बाद इसकी अल्पकालीन उपलब्धियों को देखकर वे बहुत आश्चर्यचकित हैं। बारां के जिला कलक्टर आर.के. जैन तो माह में कम से कम दो बार इस कैंप का दौरा करते हैं।

शिविर प्रभारी ने बताया कि इस शिविर के लिए अनेक लोगों ने तन मन धन से सहयोग प्रदान किया है। यहां के ग्रामवासियों, जन प्रतिनिधियों, शिक्षकों, लोक जुंबिश कर्मियों, क्षेत्रीय वन अधिकारी एवं विकास अधिकारी ने स्वैच्छिक रूप से शिविरार्थी बालिकाओं के लिए कोई न कोई सामग्री भेंट की है। यहां तक कि शाहबाद के टेलर बंधु भी अपनी ओर से मात्र दस रुपये में इनके लिए सलवार सूट सिलकर अपना सहयोग दे रहे हैं।

परियोजना समन्वयक के अनुसार बालिकाओं को पाठ्य सामग्री निःशुल्क उपलब्ध करवाई गई है। शिविर में साफ सफाई का पूरा ध्यान रखा जाता है। शिविर की संपूर्ण व्यवस्थाएं बहुत मितव्यता के साथ संपादित की जाती हैं। परियोजना द्वारा सात माह के इस शिक्षण शिविर के लिए 9 लाख रुपये का बजट प्रावधान किया गया है। बारां जिले में इसी प्रकार के तीन शिविर और आरंभ किए जाएंगे, जो क्रमशः शाहबाद, बारां एवं छीपाबड़ौद में आयोजित होंगे, जिनमें ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं को सात माह की अवधि में कक्षा पांचवीं स्तर तक की शिक्षा प्रदान कर मुख्य धारा से जोड़ने के सार्थक प्रयास किए जाएंगे। ❑

सूचना एवं जनसंपर्क अधिकारी
बारां (राज.)

स्वस्थ जीवन का आधार शाकाहार

जया मण्डावरी

विश्व में दिन–प्रतिदिन नए–नए रोग तेजी से बढ़ रहे हैं। चिकित्सालयों में मरीजों की लंबी लाइनें लगी रहती हैं। यह इस बात का परिचायक है कि हमारी जीवन पद्धति का आधारभूत ढांचा चरमरा गया है। इसकी एक खास वजह यह है कि हम सभी प्रकृति द्वारा प्रदत्त भोजन व्यवस्था से स्वयं को अलग कर रहे हैं। जबकि प्राकृतिक रूप से जीवन का आधार शाकाहार ही है।

कुछ समय पूर्व इंग्लैंड के *फ्रेश फ्रूट एंड वेजिटेबिल इंफोर्मेशन ब्यूरो* ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा था कि कच्ची सब्जियों और फलों के सेवन से न केवल मानव शरीर स्वस्थ रहता है, बल्कि इससे शरीर की अनेक व्याधियां भी दूर होती हैं, जिससे आधुनिक युग में बढ़ रहे मानसिक दबाव भी कम हो जाते हैं। इंग्लैंड की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा द्वारा वहां के अस्पतालों में मांसाहारी और शाकाहारी रोगियों की बीमारियों पर किए जाने वाले व्यय से भी इस बात का अनुमान लगाया जा सकता है कि मांसाहार शारीरिक व्याधियों को बढ़ावा देता है।

ताजे मांस में पाया जाने वाला एडरोनालिक तत्व हृदयाघात जैसे गंभीर खतरों को पैदा करने में खास भूमिका निभाता है। मांस के सेवन से शरीर में कोलेस्ट्राल की मात्रा बढ़ जाती है। मांस खाने से शरीर में यूरिक एसिड भी बढ़ जाता है। इसी के चलते जोड़ों में संधिवात, गठिया, दर्द जैसी बीमारियां भी शुरू हो जाती हैं। त्वचा के रोग, मुहासे, स्त्रियों के मासिक धर्म संबंधी रोग, माइग्रेन, धमनियों का मोटा हो जाना, आंतों का अल्सर जैसी बीमारियां भी मांस खाने से ही होती हैं। अमरीका के *स्टेट यूनिवर्सिटी आफ न्यूयार्क* द्वारा बताया गया है कि अधिकांशतः रोगों से पीड़ित व्यक्तियों में पचास प्रतिशत के बीमार होने का मुख्य कारण मांसाहार है। नोबेल पुरस्कार विजेता अमरीका के वैज्ञानिक डा. माइकल एस. ब्राउन व डा. जोसेफ एल. गोल्डस्टीन का मानना है कि मांस खाने वाले व्यक्ति को हृदय रोग, पथरी, गुर्दे के रोग अधिक होते हैं। अमरीका तथा इंग्लैंड के

वैज्ञानिकों का मानना है कि मांसाहारियों की अपेक्षा शाकाहारी अधिक शांत, खुशमिजाज, दीर्घजीवी, हृष्टपुष्ट, चुस्त और फुर्तीले होते हैं जबकि इसके विपरीत मांसाहारियों के स्वभाव में चिड़चिड़ापन और मानसिक तनाव भी होता है। वैज्ञानिकों ने अपने प्रयोगों में पाया है कि मांसाहारी व्यक्तियों की तुलना में शाकाहारी व्यक्ति अपने स्वास्थ्य पर भी ज्यादा ध्यान देते हैं तथा वे नियमित या अनियमित रूप से व्यायाम भी करते हैं।

जर्मनी के *ग्रीनग्रुप* के एक विशेषज्ञ का कहना है कि पृथ्वी पर प्रदूषण एवं पर्यावरण के अस्वच्छ होते चले जाने के पीछे एक कारण यह भी है कि पिछली दशाब्दियों में लोग तेजी से मांसाहारी हुए हैं। मिनिसोआ यूनिवर्सिटी के महामारी विज्ञान विशेषज्ञ डा. डेविड स्नोडान का कथन है कि मांसाहारी की उपस्थिति ने हमारे निष्कर्षों को अधिक पुष्ट किया है। 2,500 लोगों पर 21 वर्ष तक किए गए अध्ययन से पता चला है कि न केवल मधुमेह बल्कि गठिया, मूत्रामल और अन्य रोगों की जड़ केवल मांसाहार ही है।

रक्त कैंसर के बारे में सारे विश्व में किए गए सर्वेक्षणों से पता चलता है कि भारत जैसे मुख्यतः शाकाहारी देशों की तुलना में मांसाहारी देशों की महिलाओं में रक्त कैंसर का अनुपात ज्यादा है। शाकाहार में कम चिकनाई, और कम प्रोटीन होती है, जिससे महिलाओं में रक्त कैंसर कम होता है। पशु–वसा और पशु–प्रोटीन के कारण महिलाओं में वजन बढ़ जाने की वजह से रक्त में कैंसर वाली गांठें बनने की आशंका बढ़ जाती है। मोटी स्त्रियों में यौन हार्मोन्स ईस्ट्रोजन से जुड़े ग्लोबुलिन की मात्रा भी बढ़ जाया करती है। शाकाहारियों में मधुमेह का अनुपात भी मांसाहारियों की तुलना में प्रायः आधा ही होता है। शाकाहारी भोजन में कार्बोहाइट्रेड का स्रोत अनाजों के अतिरिक्त दाल, फलियां, फल और सब्जियां आदि होती हैं और कुल मिलाकर ग्लूकोज का स्तर उतना नहीं बढ़ता जितना कि मांसाहारियों में बढ़ जाता है। दालों और फलियों की वजह से भी ग्लूकोज धीरे–धीरे बनता है। इन दोषों की वजह से आंतों में जीआईपी नामक हार्मोन निकलता है जो इंसुलिन ज्यादा नहीं बनने देता और सामोटोस्टेटिन की मात्रा को बढ़ा देता है।

हमारे धार्मिक एवं प्राचीन ग्रंथों में भी शुद्ध और सात्विक खानपान पर जोर दिया गया है। *गीता* के अनुसार भोजन जितना शुद्ध व सात्विक होगा, व्यक्ति उतना ही दीर्घायु एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ होगा। स्वाभाविक रूप से शाकाहारी व्यक्ति खुशमिजाज और दूसरों की सहायता करने वाला होगा। विश्व स्वास्थ्य संघ के सर्वे के अनुसार मांस खाने से लगभग 160 बीमारियां शरीर में प्रवेश कर जाती हैं। मांसाहार के कारण सिर्फ मांसाहारी ही बीमार नहीं होते, बल्कि आने वाली पीढ़ी भी रोगग्रस्त पैदा होती है। होडलवर्ग एवं बर्लिन के स्वास्थ्य कार्यालयों के सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि शाकाहारी लोग दीर्घजीवी होते हैं क्योंकि शाकाहारी होने की वजह से इन्हें हृदय रोग और कैंसर रोग कम ही होते हैं।

शाकाहार के प्रसार से कृषि के वर्तमान उत्पादन स्तर पर आठ से दस गुनी तक आबादी को पाला जा सकता है। पश्चिमी देश लाखों–करोड़ों टन अनाज जानवरों को मांस के लिए मोटा करने में खपा रहे हैं। एक किलो मांस प्रोटीन पैदा करने के लिए 7–8 किलोग्राम वनस्पति, प्रोटीन और ऊर्जा प्रदान कराने वाला अनाज खिलाना पड़ता है। प्रो. जार्ज वोर्गस्टाम के अनुसार अमरीका में जितना अनाज जानवरों को खिलाया जाता है, उस पर विश्व की आधी आबादी को पाला जा सकता है।

हाल ही में डीन ओरनिस द्वारा लिखित पुस्तक *इट मोर वे लेस* ने अमरीका में तहलका मचा दिया है। इसमें 250 तरह के स्वास्थ्यवर्धक भोजन बनाने की विधियां दी गई हैं, जो पूर्णतः शाकाहारी हैं। अमरीका के विश्व प्रसिद्ध पोषण विशेषज्ञों ने अपनी पुस्तक में हृदय रोग और मांसाहार में सीधा संबंध दिखाया है। कोलेस्ट्रोल जो मुख्यतः मांस, जानवरों से प्राप्त वसा और अंडों में पाया जाता है, हृदय की धमनियों पर जम जाता है, और इसी कारण हृदय रोग होते हैं। ओरनिस के अध्ययन से यह भी स्पष्ट हो चुका है कि मांसाहारी व्यक्तियों में हृदय रोग की संभावना पचास प्रतिशत होती है, जबकि शाकाहारी व्यक्तियों में यह केवल पंद्रह प्रतिशत ही होती है। बहुत से लोग मांसाहारी भोजन को इसलिए खाना अधिक पसंद करते हैं क्योंकि इसमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। पोषण एवं आहार विशेषज्ञों ने स्पष्ट रूप से चेतावनी दी है कि ज्यादा प्रोटीनयुक्त भोजन लेने पर न केवल गुर्दे की बीमारी की संभावना बढ़ जाती है, बल्कि ओस्टियोपोरोसिस जैसे रोग भी हो जाते हैं।

पश्चिम के देशों के प्रभाव के कारण भारत में भी मांसाहार एक बहुत बड़ी स्वास्थ्य समस्या के रूप में उभरकर सामने आ रहा है। भारत में खाए जाने वाले मांस का एक बड़ा भाग उन कत्लखानों से आता है, जहां निरीह पशुओं को अत्यंत दूषित एवं सड़ांध भरे वातावरण में काटा जाता है। इस मांस को कत्लखानों से बिक्री के लिए दुकानों पर लाने की प्रक्रिया में भी किसी तरह की सावधानी नहीं बरती जाती। अधिक समय तक इनको खुली हवा में रखे जाने के कारण इसमें पहले से विद्यमान छोटे–छोटे कीटाणुओं को जहरीले पदार्थ पैदा करने के लिए भरपूर समय मिल जाता है। हमारे देश में मारे जाने वाले पशुओं का स्वास्थ्य जांचने की सिर्फ खानापूर्ति ही की जाती है। ज्यादातर बीमार पशुओं को भी पैसे के लिए मार दिया जाता है।

एक ओर जहां विश्व के करोड़ों लोग भूख–प्यास से पीड़ित हैं, वहीं दूसरी तरफ एक वर्ग मांसाहार का सेवन करते हुए न केवल जरूरत से अधिक प्रोटीन ले रहा है, बल्कि वन, पर्यावरण और भूमि के लिए भी खतरा बन रहा है। यह भी विडंबना ही है कि यही मांस इनके शरीर और स्वास्थ्य का शत्रु बन जाता है। मांसाहार की हानियों को ध्यान में रखते हुए ही पश्चिमी देशों में चिकन कार्नर की जगह अब भीड़ शाकाहारी भोजनालयों में ज्यादा दिखाई देती है। यदि हमें दीर्घायु बनना है, तो मांसाहार त्यागकर शाकाहार की ओर झुकना श्रेयष्कर विकल्प है। ❑

बी–185, डबुआ कालोनी
फरीदाबाद–121001

आम आदमी की नजर

रामाज्ञा राय शशिधर

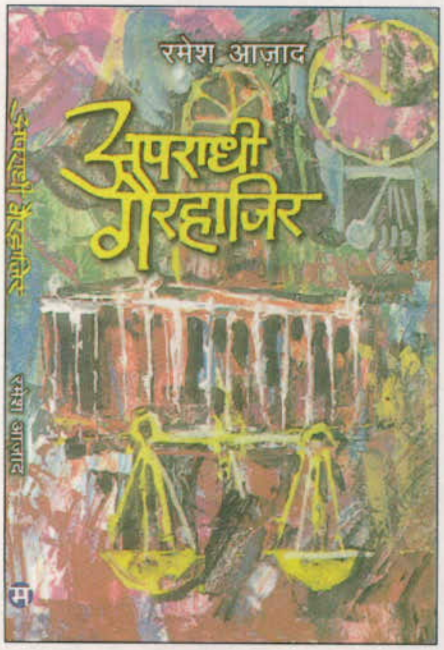

पुस्तक : अपराधी गैरहाजिर (काव्य संग्रह); कवि : रमेश आजाद; प्रकाशन : मनु प्रकाशन, दिल्ली; वर्ष : 2002; मूल्य : 100 रुपये

रमेश आजाद का दूसरा काव्य संकलन है *अपराधी गैरहाजिर*। अपराधी है कि स्वाधीनता के बाद लगातार कटघरे से गैरहाजिर है और कविता की आंखें उसका अनवरत पीछा कर रही हैं। रमेश आजाद के वर्तमान संकलन की कविताएं अपनी पूर्ववर्ती कविता तथा अपने पुरखों एवं समकालीन कविता की आंखों की रेटिना को ज्यादा चमकदार बनाती दिखती हैं। इस संकलन की यह विशेषता है।

कविता का यथार्थ मनुष्य के हृदय और मस्तिष्क के 'निजत्व' तथा 'सामाजिक' का ऐसा अंतर्संबंध है जिसके जितने आवेग और क्षण हो सकते हैं, उनकी उतनी विविधवर्णी प्रतिध्वनियां बन सकती हैं। रमेश आजाद की कविताओं में भी ऐसे ही यथार्थ एवं उनकी अनेक प्रतिध्वनियां उपस्थित हैं।

ताजा संकलन कविताओं का ऐसा कैनवस है जहां बदरपुर–ईंट बेचती पटनेवाली का जिस्म और आत्मा एक साथ लहूलुहान है; जनता की मुक्ति की छोटी–छोटी लड़ाइयां जारी हैं; इतिहास और विचार की उल्टी गिनती शुरू है; बाजार अपने घड़ियाली जबड़ों से मनुष्यता को चबा रहा है; देश के मध्यवर्गीय नागरिक आदर्श किरायेदार बने इत्मीनान से जी रहे हैं और इन सबके बीच कवि गलत विश्लेषण के खिलाफ दिमाग की जड़ताओं को विचार और भाषा की बारूद–तीली से ध्वस्त कर रहा है।

कवि अपने समय की क्रूरताओं, भयावहताओं से पूर्णतः परिचित है और इस तथ्य से भी कि कविता और भाषा का इस्तेमाल जन के लिए होना चाहिए या अभिजन के लिए। बाबा नागार्जुन ने जन कविता की परिभाषा देते हुए कहा था कि जो दर्जा चार तक पढ़े लोगों की समझ में आ जाए वही जन कविता है। अपराधी गैरहाजिर की तमाम कविताएं जनता की भाषा में जनता के दुःखों, तकलीफों और त्रासदियों का लेखा–जोखा है। पटनेवाली जो संग्रह में औपन्यासिक फलक की कविता है।

कवि को यह पता है कि वर्चस्व की संस्कृति, सत्ता और बाजार के गठबंधन के ईंट–गारे से निर्मित हुई है। मनुष्य–मनुष्य के बीच यह धरती से अनंत क्षितिज तक विभाजक का काम करती है। इसके अनेक नाम, कुल, गोत्र हैं – सामंतीकरण, उदारीकरण, उधारीकरण, सुधारीकरण – मगर दांत, आंत और पंजे एक जैसे। कविता में इसका नोटिस इस तरह है – *डब्ल्यू डब्ल्यू डाट काम / जब कर ही सकता है सब कुछ / तो अनावश्यक हैं / फावड़े, कुदाल, खुरपी, हंसिया / दादा की मूंछें, छड़ी, चश्मा।*

कवि को चिंता है कि हमारे जीवन जीने एवं संबंधों को बचाए रखने के सारे औजार विफल हो रहे हैं। इसलिए कि इस व्यवस्था में श्रम की महिमा और गरिमा का बाजार भाव सर्वाधिक नरम है। सबसे बेहतरीन दिमाग शातिरों के हाथों बिक गया है। समाज कछुआ संस्कृति में बदल रहा है। भोग, चिप्स, देह, माउस, गेम, नैपकिन, सपने, चाउमिन, कोला, मैकडोनल्ड, वुडलैंड, आकाशीय तरंगों से उतरी तस्वीरें – सभी हमारी चेतना के फेफड़ों को कीड़ों की तरह कुतर रहे हैं – *चकाचक है बाजार / देह से जान तक / व्यापार ही व्यापार।*

रमेश आजाद के लिए कविता परिवर्तन एवं लड़ाई को तेज करने का औजार है। इसलिए कवि लगातार जनतंत्र के छद्म, घिनौनेपन, कुरूपता एवं धुंधलके की खुरदरी और बेलौस भाषा से धज्जियां उड़ाता चलता है। उन्हें मालूम है कि इस व्यवस्था में शब्द और कर्म के बीच इतनी गहरी फांक है जिसे किसी बड़े मुक्ति संघर्ष से ही पाटा जा सकता है। इसलिए इस सिलसिले में उनकी कविता *गढ़ाकोला* जाती है; कालिदास से विमर्श करती है; झुग्गियों की आदिम पाठशालाओं का जायजा लेती है और बजट, हवाला, भ्रष्टाचार की गुफा में छापामारी भी करती है।

अपराधी गैरहाजिर की कविताएं आज के भारत की उस आखिरी टोली को समझ में आने वाली एवं उसके लिए औजार बनाने वाली कविताएं हैं जिसे आम नागरिक के पद की गरिमा से नोटिस और वारंट के साथ बर्खास्त कर दिया गया है। यहां कमरा–कवि या कक्ष कविता के लिए कोई जगह नहीं है।

समयांतर,
79–ए, दिलशाद गार्डन
दिल्ली–110095

(आवरण पृष्ठ 2 का शेषांश)

बालिकाओं की जरूरतों के लिए प्रावधान; आपातकालीन स्वास्थ्य देखभाल की जरूरतें; वृद्धावस्था में आर्थिक सुरक्षा और आजीविका कमाने वाले व्यक्ति की असामयिक मृत्यु होने पर उसके परिवार की सुरक्षा।

समाज के सर्वाधिक कमजोर वर्गों जैसे वृद्ध लोगों, विधवाओं और अशक्त व्यक्तियों जिन्हें परिवार तथा समाज का कोई सहारा नहीं है – को भूख से बचाना इस योजना का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होगा। तदनुसार, अंत्योदय अन्न योजना का दायरा बढ़ाने तथा खाद्यान्नों के सरप्लस स्टाक का लाभ उठाते हुए सरकार निराश्रितों के लिए अन्न पर आधारित एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा योजना लागू करेगी।

- अब तक लगभग ढाई करोड़ किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जा चुके हैं। इस योजना के तहत अगले दो वर्षों में सभी पात्र किसानों को शामिल करने के प्रयास किए जाएंगे। सार्वजनिक क्षेत्र की सामान्य बीमा कंपनियां किसानों की फसल बीमा की जरूरतों के प्रावधान का विस्तार करने तथा उसमें कुछ और सुधार लाने हेतु एक नए प्रयास को बढ़ावा देंगी।
- विद्युत मंत्रालय सन् 2012 तक "सभी के लिए बिजली" की संकल्पना को मूर्त रूप देने के लिए सन् 2007 तक देश के सभी गांवों में और अगले दस वर्षों में सभी घरों में बिजली पहुंचाने के कार्य को तेजी से पूरा करने के लिए एक कार्यक्रम शुरू करेगा। इसमें स्थानीय नवीकरण ऊर्जा संसाधनों तथा विकेंद्रित प्रौद्योगिकियों पर विशेष जोर दिया जाएगा। इसके लिए मंत्रालय द्वारा ग्रामीण विद्युत आपूर्ति प्रौद्योगिकी (रेस्ट) मिशन स्थापित किया जाएगा। राज्य विद्युत बोर्डों/सेवाओं की व्यापारिक स्थिति में सुधार लाने के लिए त्वरित विद्युत विकास तथा सुधार कार्यक्रम (एपीडीआरपी) से राज्य सरकारों के साथ मंत्रालय के परस्पर सहयोगपूर्ण संबंधों को बढ़ावा मिलेगा।
- संचार तथा सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा की गई पहल से आगामी वर्ष में 130 लाख नई टेलीफोन लाइनें और जोड़ी जाएंगी। इनमें से 75 लाख मोबाइल फोन होंगे। इससे भारत की टेलीडेंसिटी 4.38 से बढ़कर 5.61 होने की संभावना है जो आजादी के बाद अब तक की सर्वाधिक वार्षिक वृद्धि है।

  ग्रामीण क्षेत्रों की जरूरतों के मुताबिक निम्नांकित चार क्षेत्रों में उच्चस्तरीय अनुसंधान किया जाएगा : 'वर्ल्ड कंप्यूटर' (कम लागत वाला संगणना उपकरण); 'बिट्स फार आल' (ग्रामीण लोगों के घरों तक कम लागत पर इंटरनेट की सुविधा पहुंचाना); 'टूल्स फार टूमारो' (ग्रामीण युवाओं में नए–नए कार्य करने की भावना पैदा करने के लिए कम लागत पर शिक्षण उपकरण उपलब्ध कराना) और 'डिजिटल विलेज' (जहां उपर्युक्त तीनों अनुसंधान कार्यक्रमों का प्रदर्शन उनका स्पष्ट प्रभाव दिखाने के लिए किया जाएगा।)।
- पेट्रोलियम मंत्रालय अन्य संबंधित मंत्रालयों के साथ मिलकर चीनी मिलों सहित दूसरे स्रोतों से प्राप्त होने वाले इथनोल का पेट्रोल तथा डीजल के साथ मिश्रण को लोकप्रिय बनाने के लिए कदम उठाएगा। यह अन्य जैव–ईंधन के इस्तेमाल को भी बढ़ावा देगा। जनवरी 2003 से नौ राज्यों और चार संघ शासित प्रदेशों में गैसोहोल की बिक्री अनिवार्य हो जाएगी।
- वस्त्र मंत्रालय हथकरघा वस्त्रों पर एक मुश्त विशेष रियायत देने के लिए 100 करोड़ रुपये निर्धारित करेगा ताकि रोजगार पैदा करने वाले इस उद्योग को तेजी से आगे बढ़ाया जा सके और इसकी उत्पादन क्षमता में फिर से जान फूंकी जा सके। एक लाख हथकरघा बुनकरों की दक्षता में सुधार लाने के लिए 125 करोड़ रुपये की अतिरिक्त राशि खर्च की जाएगी। सरकार दस लाख बुनकरों और शिल्पकारों के लिए एक विशेष अंशदायी बीमा योजना शुरू करेगी जो जनश्री बीमा योजना को समूह बीमा से जोड़ेगी।
- पिछले वर्ष शुरू की गई बाल्मीकि अम्बेडकर आवास योजना थोड़े समय में ही काफी लोकप्रिय हो गई है। इस योजना के अंतर्गत वर्तमान वर्ष में 256 करोड़ रुपये के प्रावधान से एक लाख से अधिक स्लम आवासों के निर्माण के लिए सहायता दी जाएगी। 'निर्मल भारत अभियान' के तहत गंदी बस्तियों में सामुदायिक शौचालयों का और अधिक विस्तार किया जाएगा।
- मानव संसाधन विकास मंत्रालय बच्चों के लिए एक राष्ट्रीय कार्ययोजना तैयार करेगी जिसमें अगले दशक में भारत के बच्चों से संबंधित विकास लक्ष्यों को शामिल किया जाएगा। आगामी वर्ष में बच्चों के लिए एक राष्ट्रीय चार्टर अपनाया जाएगा। चालू वर्ष के दौरान राष्ट्रीय पोषाहार मिशन पूरी तरह से काम करने लगेगा। समेकित बाल विकास सेवाओं का देश के सभी 5,652 विकास खंडों में विस्तार किया जाएगा।
- सरकार मैला ढोने वाले कर्मियों को इस कार्य से मुक्ति दिलाने और उनके पुनर्वास कार्यों में तेजी लाने के लिए इस समय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय तथा शहरी विकास एवं गरीबी उपशमन मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही सभी अलग–अलग योजनाओं को समेकित करेगी।
- सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय अशक्त व्यक्तियों को उच्च तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने हेतु राष्ट्रीय छात्रवृत्ति प्रदान करने की एक योजना शुरू करेगा। अशक्त लोगों के लिए राष्ट्रीय कोष के तहत इस योजना का कार्यान्वयन किया जाएगा।
- संस्कृति मंत्रालय एक राष्ट्रीय पांडुलिपि मिशन शुरू करेगा ताकि अलग–अलग प्रकार की सामग्री में समाहित विभिन्न भारतीय भाषाओं में उपलब्ध वैज्ञानिक, बौद्धिक, साहित्यिक तथा आध्यात्मिक ज्ञान के बहुमूल्य भंडार का परिरक्षण तथा प्रदर्शन किया जा सके। यह मिशन, अन्य बातों के साथ–साथ, एक राष्ट्रीय पांडुलिपि पुस्तकालय की स्थापना करेगा और इन पांडुलिपियों तक लोगों की पहुंच को आसान बनाने के लिए इन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित करने के साथ–साथ मशीन द्वारा पठनीय माध्यमों में भी उपलब्ध कराएगा। ❑

आर. एन. /708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी (डी.एल.) 12057/2002
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, भुगतान के साथ आर.एम.एस. दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस

R.N./708/57
P&T Regd. No. D(DL) 12057/2002
ISSN 0971-8451,
Licenced to Post with payment at R.M.S. Delhi.

प्रमोद शरण भटनागर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया-II, नई दिल्ली-20 : कार्यकारी संपादक : राकेश रेणु